'कौल-कल्पतरु'
चण्डी
श्रीललिता-सहस्र-नाम
पुष्प ४
प्रकाशक : परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

उपयोगी पुस्तकें

वर्ष ७१ (४)

'कौल-कल्पतरु' चण्डी की विशेष प्रस्तुति

श्रीललिता-सहस्र-नाम

पुष्प-४

(५०१) श्रीगुड़ान्न-प्रीत-मानसा

से

(७५४) श्रीअपर्णा

तक

*

व्याख्याकार

'कौल-कल्पतरु' श्रीश्यामानन्द नाथ

*

प्रार्थना एवं स्तुतिकार

'आशु-कवि' पं० हरिशास्त्री दाधीच

*

आदि-सम्पादक

प्रातः-स्मरणीय 'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक

ऋतशील शर्मा

*

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

Email : chandi_dham@rediffmail.com

अनुदान ४५/-

प्रकाशक
पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक
परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

श्रद्धाञ्जलि !

'चण्डी' के प्रवर्त्तक

'कौलेन्दु' पं० शिवनाथ काटजू

१०४वीं जयन्ती (५ जनवरी, २०१३)

'शाक्त' इस संसार में ब्रह्म-मयी की लीला देखता है।
वह जिस महा-शक्ति की आराधना करता है,
उसी से इस संसार का उद्भव मानता है।
सृष्टि, पालन और प्रलय सबमें ही भगवती का रूप देखता है।
उक्त भाव को लेकर वह महा-माया की माया को अङ्गीकार कर,
पाशों को काटते हुए आगे बढ़ता है।

—पं० शिवनाथ काटजू

परा-वाणी प्रेस, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

पर्व-पत्र

।। ॐ कुम्भाय नमः ।।

तीर्थ-राज प्रयाग

'कुम्भ'-पर्व की पावन तिथियाँ

***

१. मकर-संक्रान्ति

सोमवार, १४ जनवरी, २०१३

***

२. पौष-पूर्णिमा

(शाकम्भरी-जयन्ती)

रविवार, २७ जनवरी, २०१३

***

३. मौनी अमावास्या

रविवार, १० फरवरी, २०१३

***

४. वसन्त-पञ्चमी

शुक्रवार, १५ फरवरी, २०१३

***

५. माघी पूर्णिमा

सोमवार, २५ फरवरी, २०१३

***

६. महा-शिव-रात्रि

रविवार, १० मार्च, २०१३

पर्व-पत्र

माघी गुप्त नवरात्र, 'विश्वावसु' सं० २०६९ वि०

(सोमवार, ११ फरवरी २०१३ से मङ्गलवार, १९ फरवरी २०१३)

माघी शुक्ला प्रतिपदा, ११ फरवरी २०१३

प्रतिपदा-युक्त द्वितीया को 'कलश' आदि की स्थापना कर भगवती नन्दा का पूजन

माघी शुक्ला नवमी, मङ्गलवार, १९ फरवरी २०१३ तक

***

वसन्त-पञ्चमी-पूजा (शुक्रवार, १५ फरवरी २०१३)

सर्व-पाप-मोचनी। कामदेव और रति के साथ वसन्त की पूजा।

श्री की प्राप्ति के साथ पापों को मोचन।

***

माघी शुक्ला सप्तमी-पूजा (रविवार, १७ फरवरी २०१३)

सूर्य-ग्रहण जैसी कोटि-गुणा फल-प्रदा

***

माघी शुक्ला अष्टमी-भीष्माष्टमी (सोमवार, १८ फरवरी, २०१३)

दक्षिण की ओर मुँह कर भीष्म जी के प्रति तीन तिलाञ्जलियाँ।

***

माघी शुक्ला चतुर्दशी-रटन्ती चतुर्दशी (रविवार, २४ फरवरी २०१३)

महान् वैभव की प्राप्ति हेतु भगवती तारा की पूजा।

***

माघी पूर्णिमा (सोमवार, २५ फरवरी २०१३)

श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरी ललिताम्बा की पूजा।

(५०१) श्रीगुड़ान्न-प्रीत-मानसा

गुड़-मिश्रित अन्न को पसन्द करनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! गुड़ की बनी हुई सुधा तथा गुड़ से बने पक्वान्न, पुआ, सीरा, लपसी आदि की बलि देकर विद्वान् लोग आपको प्रसन्न करते हैं क्योंकि आप गुड़ान्न-प्रीत-मानसा हो।

***

(५०२) श्रीसमस्त-भक्त-सुखदा

सब भक्तों को सुख देनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सभी भक्त-जनों को सुख देनेवाली माता श्रीललिताम्बा का नित्य स्मरण करो और सभी विपदाओं को पार करते हुए, उनका सान्निध्य प्राप्त करो।

***

(५०३) श्रीलाकिन्यम्बा-स्वरूपिणी

माता-स्वरूपा लाकिनी।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप लाकिनी अम्बा हो। आप अपनी कला से नाभि-चक्र में महा-लक्ष्मी के भाव प्रकाशित करती हो। हे विश्वेश्वरि! जो भक्त आपकी नितान्त सूक्ष्म मूर्ति का नाभि-चक्र में ध्यान करते हैं, वे सुख-पूर्वक सभी बन्धनों से पार हो जाते हैं।

***

(५०४) श्रीस्वाधिष्ठानाम्बुज-गता

'**स्वाधिष्ठान**' नामक कमल में रहनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! छह दलवाले स्वाधिष्ठान कमल में योगिनी-रूप से विराजित माता श्रीललिताम्बा का स्मरण करो और योग-निष्ठ होकर, उनका सान्निध्य प्राप्त करो।

***

(५०५) श्रीचतुर्वक्त्र-मनोहरा

चार मुखवाली सुन्दरी।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! चारों दिशाओं को और उन दिशाओं में स्थित अपने भक्तों को एक काल में देखने के लिए, कृपा-मयी दिव्य दृष्टि को धारण करती हुई आप चार मुखों से मनोहर हुई हो। आपका यह स्वरूप चतुर्वक्त्र ब्रह्मा के मन को हरनेवाला है।

***

(५०६) श्रीशूलाद्यायुध-सम्पन्ना

'शूल' आदि आयुधों को धारण करनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! पीड़ा-हरण करनेवाली, कल्याण-कारिणी, त्रि-शूल आदि आयुध-सहिता माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ और पूजो तथा सब तरफ से सुखों को प्राप्त करते हुए, उनका सान्निध्य प्राप्त करो।

***

(५०७) श्रीपीत-वर्णा
(५०८) श्रीअति-गर्विता

पीत-वर्णा और सुन्दरता के कारण अति-गर्विता। 'भास्कर राय' की व्याख्या है–

'अतीव-सौन्दर्यादि-कृतो गर्वो यस्याः सञ्जातो, गर्व-धातोर्निष्ठया वाऽति-गर्विता।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भक्तों को मनोभीष्ट फल देनेवाली, पीले वर्णवाली परा ईश्वरी माता श्रीललिताम्बा को पूजो और क्षति, मान-हानि, निरादर, तिरस्कार से मुक्त हो जाओ।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको रहस्य योग से ध्याते हैं–पूजते हैं, उन पर अति गर्व रखनेवाले भी मुग्ध होते हैं।

***

(५०९) श्रीमेदो-निष्ठा

मेद (चर्बी) में रहनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! विश्व की एक अधीश्वरी आप अम्बिका को जो भक्त राजसिक उपचारों से पूजते हैं, वे मेद बढ़ने की पीड़ा, मेदस्थ रोगों से मुक्त हो जाते हैं।

***

(५१०) श्रीमधु-प्रीता

मधु से प्रसन्न होनेवाली। 'मधु' से शहद और मद्य दोनों का बोध होता है–

'यन्मधुना जुहोति महतीमेव तद्-देवतां प्रीणाति' (श्रुति)।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भुवन-जननी भवानी माता श्रीललिताम्बा को भजो, जो मधु-मात्र से प्रसन्न हो सम्पूर्ण अभिलाषाएँ पूर्ण कर देती हैं।

***

(५११) श्रीबन्धिन्यादि-समन्विता

'बन्धिनी' से 'लम्बोष्ठी' तक छः शक्तियों से युक्ता।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त बन्धिनी आदि लम्बोष्ठी तक छह शक्तियों-सहित आपको ध्याते और प्रणाम करते हैं, वे शीघ्र ही योग-सिद्ध हो जाते हैं।

***

(५१२) श्रीदध्यन्नासक्त-हृदया

दही-भात को हृदय से चाहनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! भक्त-जन आप दयावान् और अभय प्रदान करनेवाली का दही-भात और दही मिले बड़े-पकोड़े एवं दही-मिश्रित अन्न से यजन करते हैं क्योंकि आप दध्यन्नासक्त-हृदया हो।

***

(५१३) श्रीकाकिनी-रूप-धारिणी

'काकिनी' नाम की योगिनी।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप स्वाधिष्ठान-चक्र में स्थित काकिनी-शक्ति-रूपा हो। मूलाधार और मणिपूर के बीच में आप दोनों ओर प्रकाश करती हुई दीपिका हो। आपकी सहायता के बिना भक्त-जन योग-मार्ग में आगे नहीं बढ़ सकते।

***

(५१४) श्रीमूलाधाराम्बुजारूढ़ा

'मूलाधार पद्म' (चतुर्दल) में रहनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त मूलाधार-कमल पर विराजित आपकी कला साकिनी शक्ति का यजन-पूजन करते हैं, वे श्रेय-मूलक कल्याणकारी कार्यों को करनेवाले होते हैं।

***

(५१५) श्रीपञ्च-वक्त्रा

पाँच मुखवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! भगवान् शिव के पाँचों मुखों से उत्तमोत्तम स्तुति को सुनकर, उनकी प्रशस्ति में प्रशंसा के वाक्य कहने के लिए, आप पाँच मुख धारण करती हो।

***

(५१६) श्रीअस्थि-संस्थिता

हड्डी में रहनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! उन माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो जो सभी प्राणियों की हड्डियों में उसी प्रकार से व्याप्त हैं, जैसे वह ब्रह्माण्ड में व्याप्त होकर उसे धारण करती हैं और उसके केन्द्र में रहती हैं।

***

(५१७) श्रीअंकुशादि-प्रहरणा

अंकुश आदि आयुधों को रखनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा के अंकुशादि शस्त्रों को ध्याओ-पूजो और अपने को माता के श्री-चरणों से उसी प्रकार बाँध लो, जैसे हाथी के पैर आलान से बाँधे जाते हैं।

***

(५१८) श्रीवरदादि-निषेविता

वरदा आदि चार शक्तियों से युक्ता।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! योग-क्रिया के आरम्भ में, वरदा आदि शक्तियों से समन्वित आपको जो मूलाधार-चक्र के चार दलों में ध्याते हैं, उन्हें सिद्धियाँ वरदान स्वरूप प्राप्त होती हैं।

***

(५१९) श्रीमुद्गौदनासक्त-चित्ता

मूँग-भात या मूँग की खिचड़ी पसन्द करनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! मूँग-सहित चावल में आसक्त स्वरूप में आपका जो मानसिक भाव से यजन-पूजन करता है, अथवा द्रव्य-पूजा में मूँग, चावल, घृत, शर्करा से पूर्ण आपको नैवेद्य प्रदान करता है, उसे आप अन्नपूर्णा की भाँति बहुत धन-धान्यवाला बना देती हो।

***

(५२०) श्रीसाकिन्यम्बा-स्वरूपिणी

साकिनी माता-स्वरूपा।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त योगाभ्यास करते हुए अपने मूलाधार में साकिनी अम्बा स्वरूपिणी आपको ध्याते हैं, उनकी धारणाएँ स्वत: सिद्ध हो जाती हैं, वे सभी प्रकार की सिद्धियों को प्राप्त करते हैं।

***

(५२१) श्रीआज्ञा-चक्राब्ज-निलया

'आज्ञा-चक्र-कमल' में रहनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आप विश्व की ईश्वरी कल्याण करनेवाली का भ्रू-मध्य में चिन्तन करते हैं, उनकी आज्ञाओं को सभी मानते हैं।

***

(५२२) श्रीशुक्ल-वर्णा

गौर वर्णवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जिस भक्त के मन-रूपी मानसरोवर में शुक्ल वर्णवाली राजहंसी के समान विहार करती हो, उसे तीर्थाटन, ध्यान, तप और व्रतों की क्या आवश्यकता है? तीर्थ, ध्यान, तप, व्रतों का फल आप ही हो।

***

(५२३) श्रीषडानना

छ: मुखवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! ऐश्वर्य छह प्रकार के हैं–१. ऐश्वर्य, २. धर्म, ३. यश, ४. श्री, ५. ज्ञान और ६. वैराग्य। इन छहों ऐश्वर्यों को भक्तों को वरदान-स्वरूप प्रदान करने हेतु आप छह मुखवाली बन जाती हो।

***

(५२४) श्रीमज्जा-संस्था

मज्जा में रहनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि तुम अपने शरीर का पोषण करना चाहते हो, तो मज्जा में सदा संस्थित रहनेवाली माता श्रीललिताम्बा का आश्रय मत छोड़ो। सदा उनका स्मरण-पूजन करते रहो।

***

(५२५) श्रीहंसवती-मुख्य-शक्ति-समन्विता

'हंसवती' आदि शक्तियों से युक्ता। यहाँ द्वि-दल-चक्र में दो ही शक्तियाँ—१. 'हंसवती' और २. 'क्षमावती' हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! हँसती हुई हंसवती और क्षमावती दो शक्तियाँ आज्ञा-चक्र में हैं। इनमें हंसवती मुख्य हैं। इन हंसवती मुख्य-शक्ति-समन्विता योगिनी अम्बा माता श्रीललिताम्बा से नित्य प्रार्थना करो कि वे आज्ञा-सिद्धि देवें।

***

(५२६) श्रीहरिद्रान्नैक-रसिका

हल्दी-युक्त अन्न की प्रिया।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! आज्ञा-चक्र में हल्दी प्रधान पीले भात, खिचड़ी से पूर्ण बलि आदि से प्रसन्न होनेवाली योगिनी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो और यथेष्ट मात्रा में श्री को प्राप्त करो।

***

(५२७) श्रीहाकिनी-रूप-धारिणी

'हाकिनी' नाम की योगिनी।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपकी कला ही हाकिनी-रूप धारण कर सम्पूर्ण संसार को अपनी आज्ञा से चला रही है। उसकी आज्ञा को कोई निषिद्ध नहीं कर सकता।

***

(५२८) श्रीसहस्त्र-दल-पद्मस्था

हजार-दलवाले 'सहस्त्रार चक्र' पद्म में रहनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अपने दारिद्र्य को सदा के लिए विलीन करने के लिए हजार दलोंवाले सहस्त्र-दल कमल में माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो।

***

(५२९) श्रीसर्व-वर्णोपशोभिता

सभी प्रकार के वर्णवाली अर्थात् चित्र-वर्णा। अथवा 'अ' से लेकर 'क्ष' तक के वर्णों (अक्षरों) या पचास मातृका-शक्तियों से शोभिता।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! वे मानव धन्य हैं जिनके चित्त में सभी वर्णों से शोभित माता श्रीललिताम्बा प्रकाशित होती हैं। अत: सभी प्रकार के मङ्गलों की प्राप्ति के लिए सभी वर्णों से सुशोभित माता श्रीललिताम्बा को तुम ध्याओ-पूजो।

***

(५३०) श्रीसर्वायुध-धरा

सब प्रकार के आयुध धारण करनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! वज्र, दण्ड आदि आयुधोंवाली माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और अपने को सभी प्रकार के भयों से मुक्त कर लो।

***

(५३१) श्रीशुक्र-संस्थिता

वीर्य (बीज-पदार्थ) में रहनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको शुक्ल (श्वेत) वस्त्र पहने हुए, शुक्ल पुष्प-चन्दन के आभरणों को धारण करनेवाले स्वरूप में, शुक्र (वीर्य) में संस्थित चिन्तन करते हैं और रहस्तर्पण करते हैं, वे अच्युत विष्णु-स्वरूप बन जाते हैं।

***

(५३२) श्रीसर्वतोमुखी

सब दिशाओं में मुखवाली। कहा भी है कि–'सर्वतोऽक्षि-शिरो-मुखम्।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप ही में एकतान लौ लगाए हुए, आप ही में सम्पूर्ण जगत् का भान जिन भक्तों को होता है, वे आपको सब दिशाओं में हाथोंवाली और सभी तरफ चरण रखनेवाली तथा सब तरफ सभी दिशाओं में मुखवाली सर्वतोमुखी स्वरूप में देखते रहते हैं।

***

(५३३) श्रीसर्वौदन-प्रीत-चित्ता

सब प्रकार के अन्नों को पसन्द करनेवाली। 'सर्व' से पूर्वोक्त सब प्रकार के अन्नों से भी तात्पर्य हो सकता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! सब प्रकार के ओदन अर्थात् भात से प्रसन्न होनेवाली आपको पायस, दूध-भात और हल्दी से सिद्ध अन्न के अर्पण से भक्त प्रसन्न करते हैं।

***

(५३४) श्रीयाकिन्यम्बा-स्वरूपिणी

'याकिनी' माता-स्वरूपा। इस प्रकार भगवती ललिता ही सातों योगिनियों के सातों रूपवाली है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! सिर पर ब्रह्म-रन्ध्र में हजार दलवाले कमल में जो याकिनी-अम्बा-स्वरूपिणी योगिनी हैं, वह आप ही हो। जो भक्त याकिनी-रूप में आपका ध्यान करते हैं, वे आप में मन को विलीन कर ब्रह्मानन्द का आस्वादन करते हैं।

***

(५३५) श्रीस्वाहा

देव-मण्डल-पालिका वाक्-शक्ति। 'श्रुति' कहती है कि–

वाचं धेनुमुपासीत तस्याश्चत्वारः स्तनाः, स्वाहा-कारो वषट्-कारो हन्त-कारः।
स्वधा-कारः द्वौ स्तनौ देवा उपजीवन्ति स्वाहा-कारं च वषट्-कारम्।

अर्थात् 'वाक्-शक्ति-रूपी धेनु (गाय) की उपासना' करनी चाहिए। इस गाय के चार स्तन 'स्वाहा', 'वषट्', 'हन्त' और 'स्वधा' हैं। 'स्वाहा' और 'वषट्-रूपी दो स्तनों से देव-गण जीते हैं अर्थात् पालित होते हैं।' देवताओं को हवि देने का मन्त्र 'स्वाहा' है। यह अग्नि की पोषिणी-शक्ति है। 'लिङ्ग-पुराण' के अनुसार वह्नि-मूर्ति 'शिव' की यह पत्नी है और 'स्कन्द' की माता है। 'पद्म-पुराण' के अनुसार यह 'माहेश्वर-पीठ' की अधिष्ठात्री देवी है। अथवा अपने लोगों अर्थात् अपने भक्तों के पास जानेवाली को 'स्वाहा' कहते हैं–

'स्वान् स्वकीयान् आजिहीते गच्छति इति स्वाहा।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप अपने लोकों को अपने में बुलाती हो। अपने भक्तों को ज्ञान कराती हो, उनका पालन-पोषण करती हो। अतः स्वाहा नाम से आपको जो भक्त पूजते हैं, उनके सभी जप-होमादि अतुल सुख-फल को देनेवाले होते हैं और वे शाश्वत अमर पद को प्राप्त होते हैं।

***

(५३६) श्रीस्वधा

पितृ-गण-पोषिका वाक्-शक्ति। 'श्रुति' भी कहती है कि-'स्वधा-कारं पितर ...'(वृहदारण्यक, ५/८) अर्थात् 'स्वधा' से पितरों का पोषण होता है। अथवा 'सु=सुष्टु+अधा=अधीयते अनया।' दूसरी व्युत्पत्ति है-सुष्टु=सु+अं=विष्णुं दधाति पोषयति इति स्वधा। 'स्वं स्वकीयान् दधाति पोषयति' के भाव में अपने भक्तों को पालनेवाली को 'स्वधा' कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जिस नाम से श्राद्धों में तर्पण में पितर स्वाद लेते हुए खाते-पीते हैं, उस स्वधा-रूपिणी आपके स्वरूप को जो भक्त पूजते-भजते हैं, उनके पितृ-गण प्रसन्न होकर उनकी सभी अभिलाषाएँ पूर्ण कर देते हैं।

***

(५३७) श्रीमति

बुद्धि। इससे अव्यवसायात्मिका और व्यवसायात्मिका दोनों बुद्धियों से तात्पर्य हो सकता है। यहाँ व्यवसायात्मिका चित्त-वृत्ति से ही तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपकी द्वितीय मूर्ति अविद्या है, जिसे विशेषज्ञ विद्वान् लोग 'अमति' कहते हैं। आपकी अमति मूर्ति की उपासना के बाद सुधी लोग आपकी विद्या मूर्ति मति को भजते हैं।

***

(५३८) श्रीमेधा

सर्वज्ञत्व-शक्ति। अथवा स्मरण-शक्ति, जो बुद्धि का एक विशिष्ट रूप है। 'मेधा' नाम की भगवती की मूर्ति कश्मीर में है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! विशेष आश्रयवाली बुद्धि-स्वरूपिणी मेधा माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो और सभी शास्त्रों का सार जान लो।

***

(५३९) श्रीश्रुति

'या श्रूयते इति श्रुतिः' अर्थात् जो सुनी जाती है। इससे अदृष्ट, अलक्षण, अव्यवहार्य ब्रह्म का भी बोध होता है, जिसके विषय में केवल सुनते हैं, पर किसी ने देखा नहीं। अथवा 'श्रुति' से वेद और तन्त्र से तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो श्रुति-स्वरूपिणी हैं, जो श्रवण में स्थित शक्ति हैं, जो वेद-पुराण और तन्त्रादि में सुनी जाती हैं, उन अमोघ माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-पूजो और सभी प्रकार की सफलताओं को प्राप्त करो।

***

(५४०) श्रीस्मृति

वह वस्तु, जिसका स्मरण है। सुनते तो हैं अनेक वस्तु, परन्तु सभी का स्मरण नहीं रहता क्योंकि सभी वस्तुएँ स्मरण रखने योग्य नहीं होतीं। अतः स्मरण रखने योग्य को 'स्मृति' कहते हैं। अथवा संस्मरण-शक्ति को भी 'स्मृति' कह सकते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! उन माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो, जिनकी पावन मङ्गल-मयी स्मृति सभी प्रकार की अभिलाषाओं को पूर्ण करती हैं, मन एवं हृदय को पवित्र बनाती है, पाप को दूर करती है, दुःखों को काटती है, सुख को उपजाती है।

***

(५४१) श्रीअनुत्तमा

श्रेष्ठा। यह पूर्वोक्त नाम का विशेषण है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! श्री, शोभा, ऐश्वर्य, दया, यश, पराक्रम, कारुण्य, महिमा में त्रिलोकों में आपकी अपेक्षा कोई उत्तम नहीं है। आप अनुत्तमा की दूसरे कोई देवता बराबरी नहीं कर सकते।

***

(५४२) श्रीपुण्य-कीर्ति

पुण्य (पूज्+उणादि यत्) अर्थात् पवित्र करनेवाली कीर्ति जिसकी है, वह। तात्पर्य यह है कि भगवती की कीर्ति अर्थात् क्रियाएँ पुण्य देनेवाली अर्थात् सुननेवालों को पवित्र करनेवाली हैं–

'पुण्या पुण्य-प्रदा कीर्तिर्यस्याः सा।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! पुण्य-कीर्ति नाम से प्रसिद्ध माता श्रीललिताम्बा के उदारता पूर्ण गुणों और पावन करनेवाले नामों का कीर्तन करो और अधिकाधिक पुण्य की प्राप्ति करो।

***

(५४३) श्रीपुण्य-लभ्या

'पुण्य-फलेन लभ्या' अर्थात् पुण्यों के फल से ही **'लभ्या'** अर्थात् ज्ञान-योग्या है। पुण्य से तात्पर्य प्राक्तन सुकृत से है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा के प्रति भक्ति अनेक जन्मों के पुण्यों के द्वारा मिलती है। यह दूषित हृदयवाले मनुष्यों के मन में उदित नहीं होती। अतः शुद्ध हृदय से माता श्री ललिताम्बा को ध्याओ-भजो।

***

(५४४) श्रीपुण्य-श्रवणं-कीर्तना

'पुण्य' अर्थात् विहित कर्म-रूप में श्रवण-कीर्तन जिसके हैं। अथवा **'यस्या श्रवणे कीर्तने च पुण्यः'** अर्थात् जिसके **श्रवण** और **कीर्तन** (**मनन**) कर्मों से पुण्य हो, वह।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि तुम चाँद जैसा निर्मल यश चाहते हो और ब्रह्म-ज्ञान-रूपी रसायन पीना चाहते हो, तो जिसका श्रवण और कीर्तन पावन बनानेवाला है, उन भगवती माता श्रीललिताम्बा की उपासना करो।

***

(५४५) श्रीपुलोमजाऽर्चिता

पुलोम की पुत्री इन्द्राणी (इन्द्र की पत्नी शची) की पूजिता वा आराधिता। देखिए 'देवी भागवत', छठा स्कन्ध।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! इन्द्राणी से पूजे गए चरण कमलवाली सनातनी भगवती माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और महान्-से-महान् व्यक्तियों के द्वारा सम्मानित होओ।

***

(५४६) श्रीबन्ध-मोचिनी

बन्धन को खोलनेवाली। 'बन्ध' से अविद्या का ही मुख्यतया बोध होता है। बन्ध से कारा-गृह से भी तात्पर्य है। 'देवी-भागवत', छठे स्कन्ध में राज-कन्या एकावली को कालकेतु नामक दानव के बन्धन से और 'हरिवंश' में अनिरुद्ध को बाणासुर के बन्धन से छुड़ाने की कथाएँ हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो माता श्रीललिताम्बा को सभी बन्धनों से छुड़ानेवाली जानकर स्मरण करते हैं, उनके सभी बन्धन कट जाते हैं और वे बन्धनों से सदा के लिए मुक्त हो जाते हैं। अतः तुम भी उन्हें ध्याओ और अपने अज्ञान-रूपी बन्धन से मुक्त हो जाओ।

***

(५४७) श्रीबन्धुरालका

'बन्धुर्- बन्ध+उर् च उड़ादि' अर्थात् उन्नत और अनत+अलक अर्थात् चूर्ण कुन्तल। तात्पर्य है–ऊँचे-नीचे घुँघराले केशवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! शबरी के वेश में आपके भुरभुरे बिखरे से केश मोरों की पूँछ की शोभा को भी पराजित करनेवाले हैं, वे महेश के मानस को मुदित करते हुए अपनी शोभा से उन्हें भी मोहित करते रहते हैं।

***

(५४८) श्रीविमर्श-रूपिणी

'वि+मृश्+घञ्' विमर्श का शब्दार्थ है–विशेष प्रकार का विचार। 'विमर्श' से स्फुरण या स्फुरत्ता का बोध होता है। यहाँ मूल प्रकाश-स्वरूप की विमर्श-शक्ति का बोध होता है। यह विमर्श-शक्ति विश्व की सृष्टि का मूल कारण है। 'विमर्श'-वाचक पर-पद भी है। वाच्य है–प्रकाश-शक्ति।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! पर प्रकाश-रूप परमात्मा की आप स्वाभाविक स्फुरणा हो। आपको विमर्श-रूपिणी जानकर भक्त-गण आनन्द को प्राप्त करते हुए स्वयं आनन्द-मय हो जाते हैं।

***

(५४९) श्रीविद्या-

परा-विद्या से ही यहाँ तात्पर्य है, अपरा-विद्या से नहीं। अथवा परा और अपरा दोनों विद्याओं का बोध होता है क्योंकि ललिता पराम्बा के अतिरिक्त दूसरा और कुछ नहीं है क्योंकि यह पूर्ण-ब्रह्म-रूपिणी है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जिसे प्राप्त कर मानव संसार के भय से मुक्त हो जाते हैं, जिसे पाकर विद्वान् सर्वत्र पूजे जाते हैं तथा जिसे पाकर योगी ब्रह्म-भाव पाते हैं, हे महेशि श्रीललिताम्बिके! आप वही परमा विद्या हो।

***

(५५०) श्रीवियदादि-जगत्-प्रसूः

आकाशादि महत् तत्त्व को उत्पन्न करनेवाली। श्रुति भी कहती है कि–

'आत्मन आकाशः सम्भूतः।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कर्मता क्रिया, क्रिया-रूपिणी कर्मता, कभी अगुण अचिन्तनीय अरूप और अवर्णनीय तत्त्व को पैदा नहीं कर सकती, किन्तु आप तीनों गुणोंवाली हो और आकाशादि सम्पूर्ण जगत् को पैदा करनेवाली भी हो।

***

(५५१) श्रीसर्व-व्याधि-प्रशमनी

सभी व्याधियों का नाश करनेवाली। 'व्याधि' अर्थात् स्थूल शरीर के वात, पित्त, कफ के वैषम्य से जनित पीड़ा। 'वि+आधि' अर्थात् आधि या पीड़ा को भी 'व्याधि' कहते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जगत् में दुरित पाप और आपदाओं को दूर करनेवाली तथा सभी व्याधियों को प्रशान्त करनेवाली, सब देवों की अधीश्वरी महा-त्रिपुर-सुन्दरी श्रीललिताम्बा की सभी आराधना करते हैं, तुम भी उनकी आराधना करो और पापों, आपदाओं तथा व्याधियों से मुक्त हो जाओ।

***

(५५२) श्रीसर्व-मृत्यु-निवारिणी

सब प्रकार की मृत्यु को दूर करनेवाली। 'मृत्यु' से यहाँ अप-मृत्यु अर्थात् बुरी तरह से मरने और 'अकाल' अर्थात् आयु-पूर्ति होने के पूर्व मरने से तात्पर्य है। 'मृत्यु-निवारिणी' से अमरत्व प्रदान करनेवाली अर्थात् ब्रह्म-विद्या का बोध होता है। ब्रह्म-विद्या की प्राप्ति से आत्मा के अमरत्व का ज्ञान होकर जीव अपने को अमर समझता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सर्वत्र सुख का प्रसार करनेवाली और सन्तों, विद्वानों व भक्तों के मन में विहार करनेवाली तथा सभी प्रकार की मृत्यु का निवारण/करनेवाली माता श्रीललिताम्बा की वन्दना करो और जीते हुए अमर हो जाओ।

***

(५५३) श्रीअग्र-गण्या

सारे विश्व का मूल होने के कारण 'अग्रे' अर्थात् सबसे पहले गिनी जानेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! उदारता, करुणा-भाव और वरदानों से भक्तों को भव-सागर से उद्धार करने में आप ही अग्र-गण्या अर्थात् सबसे आगे हो।

***

(५५४) श्रीअचिन्त्य-रूपा

जिसके रूप का चिन्तन अर्थात् बोध न हो। यह बड़ी-से-बड़ी '**महतो महीयान्**' और छोटी-से-छोटी '**अणोरणीयान्**' है, जिससे इसके रूप की धारणा नहीं हो सकती।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा का रूप यद्यपि चिन्तन में आने योग्य नहीं है, फिर भी वह अनेक रूपोंवाली हैं। उनका ध्यान करो, जिससे सभी कर्मों के बन्धन टूट जाएँ।

***

(५५५) श्रीकलि-कल्मष-नाशिनी

कलि-युग के पापों का नाश करनेवाली। इससे बड़े-से-बड़े, ढेर-के-ढेर पापों का नाश करनेवाली है, ऐसा बोध होता है क्योंकि कलि-युग में पाप की प्रबलता सब युगों से अधिक है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिसके अन्तःकरण में समस्त कलि-युग के कल्मष (पाप) को नाश करनेवाली माता श्रीललिताम्बा निवास करती हैं, उनका यमराज भी कुछ नहीं कर सकता। अतः तुम उन्हें सदा ध्याओ-भजो और मृत्यु के भय से मुक्त हो जाओ।

***

(५५६) श्रीकात्यायनी

कात्यायन मुनि की आराध्या देवी। अथवा सब देवताओं के तेजों से आविर्भूता देवी (महिषासुर-मर्दिनी)। ओड्याण पीठ की अधिष्ठात्री।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो विश्व का रक्षण करती हैं, जिनकी चार भुजाएँ हैं, जो चमकते हुए स्वर्ण की सी कान्तिवाली हैं, जिनकी स्तुति परिवार-सहित सभी देव-गण करते हैं, जो देवादिकों से नित्य पूजी जाती हैं और जो दया-रस की एक-मात्र निधान हैं, उन जगदम्बिका कात्यायनी माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो।

***

(५५७) श्रीकाल-हन्त्री

काल को मारनेवाली अर्थात् काल के भय को दूर करनेवाली। 'ज्ञः काल-कालो गुणी सर्व-विद्याः' (श्रुति) से यही बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अपने चित्त में सभी समय काल-हन्त्री, मृत्यु को भी मार देनेवाली माता श्रीललिताम्बा का चिन्तन कर, उनके महा-काली-स्वरूप के दशार्ण मन्त्र का जप करो और काल की सभी कलाओं को जान लो।

***

(५५८) श्रीकमलाक्ष-निषेविता

विष्णु द्वारा 'निषेविता' (नितरां सेविता)। 'पद्म-पुराण' में इसकी कथा है–

'इन्द्र-नील-मयीं देवीं, विष्णुरर्चयते सदा। विष्णुत्वं प्राप्तवांस्तेन.....।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको कमलाक्ष विष्णु से सदैव पूजिता समझकर आपका भजन करते हैं, वे लक्ष्मीवान् बनकर सदा सुख-सम्पन्न रहते हैं।

***

(५५९) श्रीताम्बूल-पूरित-मुखी

पान से पूर्ण मुखवाली। पान से लाली का तात्पर्य है, जो अनुराग या प्रेम का द्योतक है। प्रेम ही पूर्णता का कारण है, जिस प्रकार वैषम्य भेद का। भगवती पूर्ण-ब्रह्म-रूपिणी हैं। सर्वत्र इनका ध्यान ऐसा ही है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त राजसी उपचारों द्वारा किए जानेवाले रहस्य याग में, स्वाभीष्ट मन्त्र को जपते हुए ताम्बूल पूर्ण मुखवाले स्वरूप में आपको ध्याते हैं, वे आपके शुभ प्रसाद को शीघ्र ही प्राप्त कर लेते हैं।

***

(५६०) श्रीदाडिमी-कुसुम-प्रभा

अनार के फूल के सदृश कान्तिवाली। तात्पर्य कि भगवती पूर्ण रक्त कान्तिवाली हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त अपने चित्त को एकाग्र कर खिले हुए दाडिम (अनार) के पुष्प के समान लाल-लाल कान्ति के रूप में आपको ध्याते हैं, आपके मन्त्र को जपते हैं, वे सर्वत्र पूजनीय होते हैं।

***

(५६१) श्रीमृगाक्षी

हरिण की आँख जैसे नेत्रोंवाली। इससे चञ्चलता और कमनीयता का बोध होता है। चञ्चलता से चेतना का तात्पर्य है, जिस प्रकार स्थिरता से जड़ता का।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! मृग की आँख के समान आँखवाली अर्थात् विशाल सुन्दर नेत्रोंवाली के रूप में आपको जो भक्त ध्याते हैं और प्रसन्न मन से मकारादि तत्त्वों से पूजते हैं, वे यशवाले होते हैं और अपने मन के सभी अभीष्ट भोगों को प्राप्त करते हैं।

***

(५६२) श्रीमोहिनी

मन को मोहनेवाली। इससे आकर्षणी-शक्ति का तात्पर्य है। अथवा सर्व-सम्मोहन चक्र की अधिष्ठात्री देवी।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! विश्व को सम्मोहन करनेवाली, लाल कमल पर विराजमान, माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ, ह्रीं मन्त्र से उनका आराधन करो और सभी को मोहित कर लो।

***

(५६३) श्रीमुख्या

प्रधाना। इससे **मूला प्रकृति** का तात्पर्य है। श्रुति भी कहती है कि–

'अहमस्मि प्रथमजा ऋतस्य।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! चित्त-रूपा एवं आनन्द-रूपा माता श्रीललिताम्बा आदि-रूपिणी हैं, समस्त ब्रह्माण्ड में आप मुख्या, प्रधान पूज्या, मान्या हैं। आपका आश्रय भक्ति-पूर्वक ग्रहण करो।

***

(५६४) श्रीमृडानी

'मृड् सुखने' अर्थात् सुख, शिव या कल्याण। इनकी शक्ति 'मृडानी' कही जाती है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! महा-महेश्वर कामेश की गोद में विराजमान माता श्रीललिताम्बा को काम-बीज (क्लीं) का जप करते हुए, सर्व-सुख-कारिणी मृडानी महा-शक्ति समझते हुए ध्याओ और सभी सुखों से समृद्ध हो जाओ।

***

(५६५) श्रीमित्र-रूपिणी

सब जीवों का हित करनेवाली। सभी की सच्ची मित्र यही है। यह सबकी भलाई ही करती है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सम्पूर्ण जगत् का हित करनेवाली, सूर्य-मण्डल के समान तेजो-मण्डलवाली, देवों की सहायता करनेवाली माता श्रीललिताम्बा को मित्र-रूप में ध्याओ और सभी बाधाओं से मुक्त हो जाओ।

***

(५६६) श्रीनित्य-तृप्ता

सर्वदा सन्तुष्टा। किसी वस्तु की अभिलाषा इसे नहीं है। यह तो स्वयं सर्व-वस्तु-स्वरूपा है। इस अवस्था में विजातीय वस्तु की इच्छा का होना अस्वाभाविक है। अथवा नित्य स्वरूप के आनन्द से तृप्ता।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सदैव निजानन्द में रत रहनेवाली, सदैव हर्ष में परायण, विश्व की महान् महती ईश्वरी, नित्य तृप्त रहनेवाली माता श्रीललिताम्बा का भजन करो और स्वयं भी सभी प्रकार से तृप्त हो जाओ।

***

(५६७) श्रीभक्ति-निधि

भक्तों की 'निधि' अर्थात् खजाना (भण्डार)। भक्तों की कामना की पूर्ति इसी से होती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप यथार्थ में भक्तों की निधि-स्वरूपा हो। जिस प्रकार निधि संसार में अपने भक्तों के यथेष्ट कार्य पूरा करता है, ठीक उसी प्रकार आप भी भक्तों के कार्य पूरा करती हो। निधि से मनो-बल बढ़ता है, आप भी अपने भक्तों के मनो-बल को बढ़ाती हो। निधि को गोपनीय रखा जाता है, अतः माता आपके मन्त्रादि को भी गुप्त रखा जाता है।

***

(५६८) श्रीनियन्त्री

नियन्त्रण या नियमन करनेवाली। इससे विश्व-शासन-कर्त्री का बोध होता है। यह नाम ज्ञान-शक्ति का द्योतक है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सभी देवों तथा असुरों को नियन्त्रण में रखती हो और उनके पारस्परिक विरोध को शान्त कर, लोकों को रमण कराती हो तथा जैसे क्रीड़ा के बाद बालक खेल-खिलौने मिटा देते हैं, वैसे आप विरत भी हो जाती हो। इस प्रकार आप सब पर सब तरह से नियन्त्रण करती हो।

***

(५६९) श्रीनिखिलेश्वरी

सम्पूर्ण विश्व की स्वामिनी।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा को निखिल विश्व की ईश्वरी समझते हुए प्रासाद-बीज (ह्सौं, स्हौं) का जप करो और शीघ्र ही परमहंसों की सिद्धि को प्राप्त करो।

***

(५७०) श्रीमैत्र्यादि-वासना-लभ्या

१. मैत्री, २. करुणा, ३. मुदिता और ४. उपेक्षा–ये ही चार वासनाएँ हैं। सुखी में 'मैत्री', दुखी में 'करुणा', धर्मी में 'मुदिता' और पापी में 'उपेक्षा'– इन्हीं चार भावों में भगवती या परमा सत्ता व्यवस्थिता है। 'विष्णु भागवत' में इसका प्रतिपादन है। योग-सूत्र भी कहता है–

'मैत्री-करुणा-मुदितोपेक्षाणां सुख-दुःख-पुण्यापुण्य-विषयाणां भावनातश्चित्त-प्रसादनम्।'

उक्त चारों वासनाओं से भगवती 'लभ्या' है अर्थात् प्राप्त की जा सकती है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा का स-बीज और मैत्री, करुणा, मुदिता तथा उपेक्षा-रूपी वासनाओं में व्यवस्थिता सगुण ध्यान करो एवं सभी क्लेशों-अविद्या, अस्मिता, राग-द्वेष, अभिनिवेश से मुक्त हो जाओ।

***

(५७१) श्रीमहा-प्रलय-साक्षिणी

'प्रलय' कई प्रकार के हैं-खण्ड-प्रलय, जल-प्रलय आदि। 'प्रलय' का साधारण अर्थ है-नाश। सूक्ष्म भाव में इससे प्रसुप्ति का भी बोध होता है। 'महा-प्रलय' वास्तव में वह है, जब पञ्च-तत्त्व अर्थात् आकाश-तत्त्व का भी लय होता है। अनुपहित-चेतनावस्था ही महा-प्रलय की अवस्था है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जब ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर आदि अमर भी मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं, तब संहार के समय भैरव परम-शिव अद्‌भुत ताण्डव नित्य करते हैं और उसकी साक्षी एक-मात्र आप ही रहती हो। आप धन्य हो।

***

(५७२) श्रीपरा-शक्ति

सर्व-श्रेष्ठ शक्ति। इसमें इच्छा, ज्ञान और क्रिया तीनों शक्तियाँ हैं। दूसरे शब्दों में इसे धर्मी शक्ति भी कह सकते हैं। यह समष्टि-भाव की है। व्यष्टि-भाव की दसवीं शक्ति को 'परा-शक्ति' कहते हैं। जीव-शरीर में शक्ति-मूलक १. त्वक्, २. सृक्, ३. मांस, ४. मेद और ५. अस्थि-ये पाँच शक्तियाँ और शिव-मूलक १. मज्जा, २. शुक्र, ३. प्राण और ४. जीव-ये चार शक्तियाँ हैं। इन्हीं नौ धातुओं का शरीर बना है। इनके परे जो दसवीं शक्ति है, उसी की संज्ञा 'परा-शक्ति' है। इसी की वेदान्तिक संज्ञा है-अन्तरात्मा, जो जीवात्मा से भिन्न है। अथवा एक विशिष्ट परा-मन्त्र की शक्ति का भी इस नाम से बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अत्यन्त अनुराग, भक्ति से परा-शक्ति माता श्रीललिताम्बा की पूजा करो और जीव-भाव को लाँघ कर, परम तत्त्व में प्रवेश करो।

***

(५७३) श्रीपरा-निष्ठा

सबसे बड़ा विश्वास। इससे विशेष रूप के ज्ञान की परा-काष्ठा का बोध होता है। 'गीता' में इस भाव का उल्लेख इन शब्दों में है कि-'सर्व-कर्माखिलं पार्थ!, ज्ञाने परि-समाप्यते'। इससे ज्ञान की चरम सीमा का बोध होता है। निष्ठा दो प्रकार की है-१. प्रत्यक्ष और २. परोक्ष अर्थात् १. श्रौती और २. स्वानुभवात्मिका।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो केवल शुद्ध अद्वैत है, जिसमें आत्मा की स्थिति साक्षी के रूप में रहती है, जो चित्त मात्र ही है, जिसमें कोई क्रिया नहीं होती और जो विशेष बोध-रूपिणी है, वह आप ही हो। हे परम समर्थ महा-माये! आप मुझ पर प्रसन्न होइए।

***

(५७४) श्रीप्रज्ञान-घन-रूपिणी

'प्रकर्षेण ज्ञानं' अर्थात् प्रकृष्ट ज्ञान से प्रकृष्ट अर्थात् सबसे बड़े यथार्थ ज्ञान-रूपवाली। 'प्रज्ञान' से प्रकृष्ट वृत्ति-भिन्न नित्य ज्ञान का भी बोध होता है। 'घन' से तात्पर्य है–अविद्या के लेश मात्र से भी सर्वदा अछूत अथवा अविद्या से अस्पृष्ट अथवा निरन्तर, यथार्थ विशेष ज्ञान-रूपिणी। योग-दर्शन के शब्दों में इसे 'ऋतम्भरा प्रज्ञा' कहते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! प्रज्ञान-घन-रूपिणी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और उनके चरणों की प्रभा का नित्य सेवन करते हुए भोग व मोक्ष को प्राप्त करो।

***

(५७५) श्रीमाध्वी-पानालसा

मधु या महुए के फूलों से बने मद्य के पान से 'अलसा' अर्थात् आन्तरिक निष्ठा से शीतला। 'मधु' के अनेक तात्पर्य हैं। 'मधु'–वारुणी से परमानन्द-रस का तात्पर्य है। 'अलसा' से बाह्य व्यापार-रहिता का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त नित्य महा-निशा में अंगूरों की सुरा के पान से आनन्दित आपके विलक्षण स्वरूप को ध्याते हुए, विष्णु-ब्रह्मा-महेश-इन्द्र-कुबेर आदि देव-देवाङ्गनाओं के सहित आपका तर्पण करते हैं, वे संसार में दिव्य सिद्ध हो जाते हैं।

***

(५७६) श्रीमत्ता

नशे में चूर अर्थात् आत्म-विस्मृता। सूक्ष्मार्थ है–पराहन्ता-भाव-रूपा। जब इस नाम की व्युत्पत्ति 'मत्' शब्द से होती है, तब इसका शब्दार्थ होता है–अहन्ता-भाव, किन्तु इस अहन्ता से पराहन्ता का ही बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको अतिशय मधु-पान से आनन्दिता समझते हुए, अपनी निज सत्ता को समर्पित कर देते हैं, उनके चित्त में तुर्या अहन्ता-रूपिणी आप महा-शक्ति शीघ्र ही उदित हो जाती हो और वह आपके अनिर्वाच्य प्रकाश में पहुँच जाता है।

***

(५७७) श्रीमातृका-वर्ण-रूपिणी

पचास (दूसरे मत से इक्यावन) '**मातृका**' अर्थात् अक्षर ('अ' से 'क्ष' तक) के वर्ण (रङ्ग) के सदृश रूपवाली। प्रत्येक अक्षर का वर्ण पृथक्-पृथक् है। एक सिद्धान्त यह भी है कि सभी अक्षर शुक्ल-वर्ण के हैं। '**सनत्कुमार-संहिता**' के अनुसार '**अ-कारादि**' १६ स्वर–धूम्र-वर्ण, '**कादि**' पञ्चाक्षर–सिन्दूर-वर्ण, '**ङ**' से '**फ**' तक गौर-वर्ण, '**बादि**' पाँच–अरुण-वर्ण, '**ल-कारादि**'– काञ्चन वर्ण, '**ह-कार**' और '**क्ष-कार**'–विद्युद्-वर्ण हैं। तन्त्रान्तर का भिन्न मत है। यहाँ तात्पर्य यह है कि भगवती सर्व-वर्ण-रूपा हैं।

अथवा इस भगवती वाच्या के **मातृका-वर्ण** ही '**रूपा**' अर्थात् निरूपका या वाचका हैं। अथवा मातृका वर्णों की '**रूपिणी**' अर्थात् जननी (सृजन करनेवाली) है–'**मातृका वर्णान् रूपयति जनयति।**' '**मातृका-विवेक**' के अनुसार **श्रीचक्र-रूपिणी** से तात्पर्य है क्योंकि **श्री-चक्र** का प्रस्तार **मातृका-वर्णों** के आधार पर है, जिससे **श्री-चक्र** ही **मातृका-वर्ण-स्वरूप** सिद्ध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आदि 'अ' से लेकर 'क्ष' पर्यन्त, स्वर-व्यञ्जन दोनों प्रकार के वर्णों की अगणित मूर्तियों में बहुत प्रकार के सफेद, पीले, लाल, नीले, हरे वर्ण हैं, उन वर्णों को आप में लय करते हुए आपको जो भक्त ध्याते हैं, उनके चित्त में आप वैसी ही मूर्ति में प्रकट होती हो।

***

(५७८) श्रीमहा-कैलास-निलया

महा-कैलास पर रहनेवाली। जिस प्रकार **शिव** दो प्रकार के हैं–१. **पर-शिव** और २. **अपर-शिव**, उसी प्रकार उनके रहने के स्थान भी १. **पर-कैलास** अर्थात् महा-कैलास और २. **अपर कैलास** हैं। इसका उल्लेख '**शिव-पुराण**' में भी है। '**त्रिपुरा-सार**' आदि तन्त्रों में **श्री-चक्र** के बिन्दु की संज्ञा '**महा-कैलास**' है। व्यष्टि में भी सहस्रार में ब्रह्म-रन्ध्र को '**महा-कैलास**' कहते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सहस्रार-रूपी महा-कैलास में रहनेवाली, पर-शिव के अङ्क में स्थिता माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ और अद्वितीय अमृत का आस्वादन करो।

***

(५७९) श्रीमृणाल-मृदु-दोर्लता

कमल-नाल के विस-तन्तु अर्थात् **सूक्ष्म सूत्र** के सदृश कोमल बाहु-लतावाली। यह **सूक्ष्मता-द्योतक** है। **ब्रह्म-सूत्र**–'**सूक्ष्मं तु तदहन्त्वात्**' से इसका स्पष्टीकरण होता है। इससे '**अदृश्यत्वागुणक**' का तात्पर्य है। श्रुति-वाक्य '**अणोरणीयान्**' भी अदृश्यत्व का द्योतक है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! चाँद से सुन्दर मुखवाली, कानों में कुण्डलों से शोभायमान, मृणाल-सी बाहुलतावाली, मोतियों की माला पहने हुए, अपनी मुस्कान से चाँदनी को तिरस्कृत करनेवाली, वरदान और अभय-दान-परायणा माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो और सदा आनन्दित रहो।

***

(५८०) श्रीमहनीया

पूज्यत्व से 'महनीया' है अर्थात् पूज्या या पूजन-योग्या होने से बड़ी है। इससे श्रुति-वाक्य 'महतो महीयान्' का रहस्य-भाव में तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! त्रि-भुवनवासियों द्वारा पूजनीया माता श्रीललिताम्बा के दोनों चरणों को अर्ध-रात्रि में लाल कमलों से पूजते हुए, लक्ष्मी-बीज (श्रीं) से सम्पुटित आपका मन्त्र जपो और सर्वोत्कृष्ट भाग्य को प्राप्त करो।

***

(५८१) श्रीदया-मूर्ति

सौम्य-रूपा। इससे बोध होता है कि यह कभी किसी पर क्रोध नहीं करती। यहाँ तक कि अपने वैरी अर्थात् अनीश्वर-वादी पर भी अर्थात् आसुरी-सर्गवाले असुरों पर भी दया ही करती है। 'सप्तशती' की उक्ति है–'वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्' इत्यादि।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! समस्त विश्व का भरण-पोषण करनेवाली माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और धनी-से-धनी तथा विद्वान्-से-विद्वान् बन जाओ।

***

(५८२) श्रीमहा-साम्राज्य-शालिनी

इससे प्रपञ्चेश्वरी का तात्पर्य है। अथवा महा-कैलास की स्वामिनी है, ऐसा भी बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! वे भक्त भाग्यशाली हैं जो सुधा-समुद्र में मणि-द्वीप में विश्व-साम्राज्य का सञ्चालन करती हुई, रत्न-स्वर्ण की माला पहने हुई आपको ध्याते हैं, भजते हैं।

***

(५८३) श्रीआत्म-विद्या

आत्मा की विद्या। इससे आत्मा का परिचय या ज्ञान होता है। इसके बिना ब्रह्म का ज्ञान नहीं हो सकता–'आत्म-स्वरूप-ज्ञानं विना ब्रह्म-स्वरूप-ज्ञानासम्भवात्।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा से ही लोग आत्म-बोध पाते हैं। आत्मा को आप ही जानती हैं और आप ही आत्मा हैं। अतएव आत्म-विद्या-रूपी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और लोक व पर-लोक को जाननेवाले बन जाओ।

***

(५८४) श्रीमहा-विद्या

परा-विद्याओं में भी बड़ी (श्रेष्ठा) विद्या। महत्त्व का कारण यह है कि यह सब अनर्थों को दूर करती है। इससे काली आदि दस सिद्ध विद्याओं का, जिन्हें महा-विद्या भी कहते हैं, बोध होता है। अथवा नव-दुर्गा विद्याओं से भी तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

विद्वान् लोग जिसके द्वारा महत् तत्त्व को जानते हैं, जो सभी विद्याओं से महती है तथा जिसकी महत्ता महान् है और जिसे तत्त्व-वेत्ता महा-विद्या कहते हैं, वह माता श्रीललिताम्बा कृपा कर मेरे मोह को दूर करे।

***

(५८५) श्रीश्रीविद्या

पञ्चदशी विद्या। इसे हादि विद्या भी कहते हैं। महा-विद्याएँ कादि, हादि और सादि तीन क्रमों की हैं। 'श्री' से लक्ष्मी या प्रकाश-शक्ति का तात्पर्य है। इस प्रकार विज्ञान (विशेष ज्ञान) का बोध होता है। इससे मधु-विद्या का भी बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप लक्ष्मी, शोभा, कान्ति आदि के जानने का कारण हो और स्वयं श्रीयुक्ता विद्या हो। आपसे परा कोई विद्या नहीं है।

***

(५८६) श्रीकाम-सेविता

मन्मथ (कामदेव), विदेह, कामेश इत्यादि से सेविता। अथवा यथा-काम-सेविता अर्थात् सब कामनाओं की पूर्ति के हेतु सेविता अथवा जिस किसी प्रकार से सेविता।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! महा-कामेश पर-शिव तथा कामदेव से सेव्यमान माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और मनो-गत सभी काम को प्राप्त करो।

***

(५८७) श्रीषोडशाक्षरी विद्या

श्री-युक्ता अर्थात् श्री-बीज-युक्त पञ्च-दशाक्षरी विद्या। यह विद्या शाम्भवी विद्या है, जो गुप्त है। अधिकारानुसार ही सोलहवें बीज की योजना होती है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा की श्री-युक्त षोडश अक्षरोंवाली विद्या का श्रद्धा-पूर्वक ध्यान करो और श्रेष्ठ सिद्धियों को प्राप्त करो।

***

(५८८) श्रीत्रिकूटा

तीनों कूट-स्वरूपा। पञ्च-दशाक्षरी के वाग्भव आदि तीन कूट हैं। इससे तीनों कूटों के संयुक्त स्वरूप का ही बोध होता है, जिससे पूर्ण-ब्रह्मत्व का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त जिसमें तीन कूट स्फुरित होते हैं, जो कूट अर्थात् शृङ्ग-शिखर की तरह सर्वोच्च है, जो अविनाशी अक्षर-रूपिणी वर्ण-मयी परे-से-परे जगत् की महेश्वरी है, इस रूप में आपको ध्याते हैं वे फिर संसार में कहीं उत्पन्न नहीं होते।

***

(५८९) श्रीकाम-कोटिका

कोटि अर्थात् असंख्य कामवाली। इससे असंख्य इच्छा-शक्तियों की धर्मी-शक्ति का बोध होता है। अथवा 'काम' से पर-शिव का तात्पर्य है और 'कोटि' से एक देश का बोध होता है। इस प्रकार जिसके पर-शिव एक-देशस्थ हैं, ऐसा तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप काम-कोटि अर्थात् करोड़ों कामों को उपदेश देती हो, करोड़ों कामों से आप अधिक सौदर्न्यवती हो तथा काम से ऊँचे अग्र-भाग में स्थित हो।

***

(५९०) श्रीकटाक्ष-किङ्करी-भूत-कमला-कोटि-सेविता

'कटाक्ष' मात्र से अर्थात् एक ही बार देख लेने से वश में कर ली गई 'कोटि' अर्थात् असंख्य 'कमला' अर्थात् लक्ष्मियों से सेविता। यहाँ महा-विद्या कमला से नहीं, अपितु सिद्धियाँ देनेवाली अपरा-शक्ति से तात्पर्य है। इससे यह बोध होता है कि भगवती जिस भक्त को किञ्चित् भी देखती हैं, उस भक्त के पास सिद्धियाँ आप-से-आप आ जाती हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! करोड़ों लक्ष्मियाँ आपके कटाक्ष की आज्ञा-वश-वर्तिनी दासियाँ हैं। आप जिन भक्तों की इष्ट देवता होती हो, उनके ऐश्वर्य की कौन क्या बात कहे? वे सर्वोत्कृष्ट ऐश्वर्यवान् होते हैं।

***

(५९१) श्रीशिरस्था

सिर पर रहनेवाली। व्यष्टि-भाव में 'शिर' से ब्रह्म-रन्ध्र का और समष्टि-भाव में परमा सत्ता का तात्पर्य है अर्थात् जिसके ऊपर या जिससे श्रेष्ठ कोई सत्ता नहीं है। यह विन्दु-द्योतक है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप त्रि-गुणात्मक प्रणव के शिर पर विराजती हुई, प्रणव के तत्त्वार्थ को ललित-रूप में प्रकाशित करती हो। भक्त आपका इस प्रकार चिन्तन कर चिदानन्द रस का पान करते हैं।

***

(५९२) श्रीचन्द्र-निभा

चन्द्रमा के सदृश दीखनेवाली। अथवा विन्दु के नीचे नाद है, जिसका रूप अर्ध-चन्द्र-जैसा है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त शरत्-कालीन चन्द्र की प्रभा के समान प्रभावाली आपकी मूर्ति को श्वेत वस्त्र, पुस्तक तथा वीणा हाथ में धारण किए हुए, अमूल्य मोतियों के आभरणों की प्रभा-पुञ्ज बरसानेवाले स्वरूप में ध्याते हैं व वाग्वीज को जपते हैं, वे वागीश के सामन विज्ञ हो जाते हैं।

***

(५९३) श्रीभालस्था

मस्तक पर रहनेवाली। व्याख्या ५९१ वत्।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको अपने भाल-स्थल पर स्मरण करता हुआ, वाणी-वीज को रात्रि के मुख्य मध्यम प्रहर में जपता है, वह शीघ्र ही सर्व-मान्य कवीन्द्र बन जाता है।

***

(५९४) श्रीइन्द्र-धनुः-प्रभा

इन्द्र-धनुष के समान प्रभावाली। इससे पूर्ण चन्द्र के बदले अर्ध-चन्द्र के भाव का स्पष्टीकरण होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! माणिक्य लाल, माहेन्द्र नीलम, पुष्पराग पुखराज, वज्र हीरा, श्वेत रत्नों से जड़े हुए स्वर्ण-मय आपके मुकुट की कान्ति, आपके द्वारा धारण किए चन्द्रमा की कलाओं से मिलकर इन्द्र-धनुष की प्रभा-जैसी चमकती है।

***

(५९५) श्रीहृदयस्था

हृदय में रहनेवाली। अथवा अनाहत-चक्र की कर्णिका में अष्ट-दल-चक्र में रहनेवाली। अथवा ध्येयत्व-भाव के कारण यह संज्ञा है। अथवा 'हृदय' से परा-वीज का तात्पर्य है। 'कल्प-सूत्र' में है-'प्रभु-हृदय-ज्ञातुः पदे पदे सुखानि भवन्ति।' अथवा इस संज्ञा से अन्तर्यामिनी का बोध होता है। अथवा 'हृदय' से जगत् के बीज का बोध होता है। इस प्रकार विश्व-रूपिणी है, ऐसा बोध होता है। पुनः 'हृदय' से आत्मा और परमात्मा दोनों का बोध होता है-'स वा एष आत्मा हृदि तस्यै तदेव निरुक्तं हृदयं इति तस्माद् हृदयम्'-'छान्दोग्य उपनिषत्', ८/३। 'एष प्रजापतिर्यद्धृदयमेतद् ब्रह्म।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त पर-शिव कामेश्वर के हृदय में विराजित हुई आप पराम्बा को अपने हृदय में भावित करता है, वह सभी के लिए सम्माननीय हो जाता है।

***

(५९६) श्रीरवि-प्रख्या

सूर्य के समान कान्तिवाली। हृदय की स्थिति सूर्य-मण्डल में है। यह दूसरे कूट के स्वरूप का द्योतक है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप अन्धकार अर्थात् अज्ञान की राशि को मूल सहित नष्ट करती हुई, लोकों में शुद्ध प्रकाश बरसाती हुई, भक्तों में विशुद्ध ज्ञान प्रसारित करती हुई, सभी मनुष्यों को अपने-अपने कर्मों में प्रवृत करती हो। इस प्रकार आप प्रातः-काल उदित हुई रवि-प्रख्या, सूर्य की प्रकृष्ट शोभा के समान हो।

***

(५९७) श्रीत्रिकोणान्तर-दीपिका

त्रिकोण के मध्य में प्रकाश करनेवाली। यहाँ 'त्रिकोण' से वह्नि-मण्डल में स्थित मूलाधार त्रिकोण का ही तात्पर्य है। यह प्रथम कूट के स्वरूप का द्योतक है। इससे तीनों पुरों को प्रकाशित करनेवाली हैं, ऐसा बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको मूलाधार-कमल की कर्णिका के मध्य त्रिकोण के भीतर दीपिका-सी भावित करते हुए आपको ध्याते हैं-भजते हैं, वे भुवन-भावन बन जाते हैं।

***

(५९८) श्रीदाक्षायणी

दक्ष की कन्या। या दाक्षायण यज्ञ-स्वरूपा। 'दाक्षायणी' नामक एक तारा (नक्षत्र) भी है-'दाक्षायणी त्वपर्णायां, रोहिण्यां तारकासु च।'-'विश्व-कोश'।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको दक्ष प्रजापति की पुत्री 'दाक्षायणी' के रूप में अपने हृदय में भावित करते हैं, उनके जप-यज्ञ सफल होते हैं।

***

(५९९) श्रीदैत्य-हन्त्री

दैत्यों का नाश करनेवाली (दो खण्डनेक्तिन्)। दिति-शब्द से 'दैत्य' बना है। दिति से द्वैत-भाव या अन्धकार का तात्पर्य है। इस प्रकार रहस्यार्थ है-द्वैत-भाव अर्थात् अविद्या का नाश करनेवाली अद्वैत-महा-विद्या या अद्वितीया महा-विद्या।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! तमो-गुण और अज्ञान से पूर्ण, देवों पर बार-बार आक्रमण करनेवाले भण्डादि दानवों के विनाश के लिए आविर्भूत होती हुई, आप दैत्य-हन्त्री नाम से प्रसिद्ध होती हो।

***

(६००) श्रीदक्ष-यज्ञ-विनाशिनी

दक्ष प्रजापति के यज्ञ का नाश करनेवाली। इसकी कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। यद्यपि शिव द्वारा ही यज्ञ का नाश हुआ, तथापि निमित्तत्त्व के कारण ही कर्तव्य का बोध होता है। अथवा 'दक्ष यज्ञ' से दक्षिणा का बोध होता है। ऐसे यज्ञों का नाश करनेवाली है। 'दक्ष' या दक्षिणाचार से 'पशु-भाव' अर्थात् द्वैत-भाव का तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको दक्ष के यज्ञ को नष्ट करनेवाले स्वरूप में नहीं ध्याते-पूजते, उनके यज्ञ-दान-क्रिया सभी विफल हो जाते हैं।

***

(६०१) श्रीदरान्दोलित-दीर्घाक्षी

'दर' अर्थात् ईषत् आन्दोलित अर्थात् चञ्चल दीर्घ नेत्रवाली। 'दर' का अर्थ भय भी है, इस भाव में भय का नाश करनेवाली बड़ी आँख जिसकी है, वह। तात्पर्य कि कटाक्ष-पात मात्र से अर्थात् एक बार देख लेने ही से भय का नाश करनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे कुछ-कुछ चञ्चल विशाल लोचनवाली माता श्रीललिताम्बा! आप जिन भक्तों पर सुप्रसन्न होती हो, वे सभी जगह आदर पाते हैं और उनके सभी भय दूर हो जाते हैं।

***

(६०२) श्रीदर-हासोज्ज्वलन्मुखी

'दर' अर्थात् ईषत् हास से जिसका मुख शोभायमान है। इससे नित्यानन्दत्व का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे मन्द-हास से उज्ज्वल मुखवाली माता श्रीललिताम्बा! आप जिन भक्तों पर कृपा करती हो, वे सभी प्रकार से स्वयं सुखी होते हैं और दूसरों को भी सुख पहुँचाते हैं।

***

(६०३) श्रीगुरु-मूर्ति

गुरु-स्वरूपा। 'गुरु' शब्द देवता का वाचक है। 'सुन्दरी-तापनीय' कहता है कि 'जिस प्रकार घट, कुम्भ और कलश एकार्थ-वाचक हैं, उसी प्रकार मन्त्र, देवता और गुरु एकार्थ-वाचक हैं।' 'गुरु' से आदि-शक्ति 'विमर्श-शक्ति' का बोध होता है, जो देवता अर्थात् 'प्रकाश-शक्ति' से भिन्न नहीं है। 'गुरु'–ज्ञान है, तो 'देवता'–ज्ञेय है। ज्ञेय का ही ज्ञान है। अतः दोनों में कोई भेद नहीं है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपको कुछ भक्त भवानी अर्थात् भव (शिव) की पत्नी कहते हैं, कुछ जगत् की माता कहते हैं, कुछ माया, रमा, लक्ष्मी कहते हैं और कुछ मन्त्र, देवता व गुरु को एकार्थ में लेते हुए 'गुरु-मूर्ति' कहते हैं।

***

(६०४) श्रीगुण-निधि

गुणों की 'निधि' अर्थात् समूह या भाण्डार। इससे धर्मी या गुणी-शक्ति का बोध होता है। 'गुण' का एक अर्थ व्यूह है और 'निधि' से निधि-संख्या अर्थात् ९ का बोध होता है। इस प्रकार अर्थ है नौ व्यूहवाली, जिससे परमात्मा का बोध होता है–'नव-व्यूहात्मको देवः, परानन्दः परात्मकः।' नौ व्यूहों के नाम हैं–१. काल-व्यूह, २. कुल-व्यूह, ३. नाम-व्यूह, ४. ज्ञान-व्यूह, ५. चित्त-व्यूह, ६. नाद -व्यूह, ७. विन्दु-व्यूह, ८. कल्प-व्यूह और ९. जीव-व्यूह।

'गुण' का एक और अर्थ रज्जु (रस्सी) है, उसकी 'निधि' अर्थात् 'नितरां धीयते अस्यां' जिसमें हो। इससे भगवती स्वयं अविद्या-रूपिणी हैं, जिसमें आवरण-शक्ति और विक्षेप-शक्ति दोनों हैं। ये ही दोनों रज्जु-स्वरूप हैं, जिनसे विश्व बँधा है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! हे जगदम्बिके! हे शिवे! हे कल्याण देनेवाली माँ! सत्त्वादि गुण आपसे प्रकट होते हैं और फिर आप में ही विलीन हो जाते हैं। ऐसा बार-बार होता है। जैसे आकाश में बादल उदित होते हैं और आकाश में ही विलीन हो जाते हैं। इसीलिए विशेषज्ञ आपको जिसमें गुण निहित हैं, गुण-निधि कहते हैं।

***

(६०५) श्रीगो-माता

गायों की माता 'सुरभि'। 'गो'–शब्द के अनेक अर्थ हैं, जिनमें रश्मि, दिशा और वाक् युक्त हैं। 'रश्मि' अर्थात् ज्योति के अर्थ में ज्योतियों की माता अर्थात् परम ज्योति या मूला 'प्रकाश-शक्ति' का बोध होता है। 'दिशा' की माता से 'दिक्-शक्ति-मती' का और 'वाक्'-शक्ति की माता से 'शब्द-ब्रह्म' से परे 'निष्कल पर-ब्रह्म' का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! हे भगवति शिवे! आप गो-शब्द से भावित होनेवाले गौ, स्वर्ग, दृष्टि, भूमि, जल, वाणी, दिशा आदि सभी को माता की तरह पालती हो। इसीलिए आपको गो-माता सुरभि, सब कामनाओं को देनेवाली कहा गया है।

***

(६०६) श्रीगुह-जन्म-भूः

'स्कन्द-कुमार' की उत्पत्ति का स्थान। रहस्यार्थ है–अविद्या से आवृत्त जीवों का जन्म-स्थान। इससे विश्व-मातृत्व का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! अज्ञान से संवृत होने के कारण सभी प्राणी गुह कहलाते हैं और इन गुहों को आप ही पैदा करती हो, पालती हो। अतः आपको गुह-जन्म-भूः कहा जाता है। गुह स्कन्द कार्तिकेय का भी नाम है, जिनकी आप प्रसवित्री जननी हो।

***

(६०७) श्रीदेवेशी

देवताओं की स्वामिनी। 'देव्' शब्द दिव् धातु से बना है, जिसका प्रयोग प्रकाश करने, क्रीड़ा करने आदि में होता है। अतः इससे परं ज्योति, परम ज्ञान, मूला लीला-मयी आदि का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त देवों को ऐश्वर्य प्रदान करनेवाली, पञ्च-ब्रह्म- १. ब्रह्मा, २. विष्णु, ३. रुद्र, ४. ईश्वर, ५. सदा-शिव से समुल्लासित नव-सिंहासन पर विराजमान, सबसे उत्कृष्ट, चार भुजाओं में धनुष, बाण, अंकुश और पाश धारण करनेवाली परमेश्वरी के रूप में आपको पूजता है, वह राजा के समान हो जाता है।

***

(६०८) श्रीदण्ड-नीतिस्था

दण्ड-नीति अर्थात् अर्थ-शास्त्र में रहनेवाली। 'दण्ड-नीति' को 'नीति-शास्त्र' भी कहते हैं। इससे 'विश्व-धर्म' का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको दण्ड-नीति में स्थित मानते हुए नीति का पालन करते हैं, वे विपुल यश को प्राप्त करते हैं।

***

(६०९) श्रीदहराकाश-रूपिणी

'दहर' का अर्थ है छोटा, किन्तु 'दहराकाश' से हृदय का ही बोध होता है, न कि घटाकाश, मठाकाश आदि का। 'उत्तर-मीमांसा' के दहराधिकरण के सूत्रों से इसके रहस्यार्थ का ज्ञान होता है। 'ब्रह्म-सूत्र' के 'शक्ति-भाष्य' के अनुसार 'दहर'–पद से अल्प का नहीं, आत्मा या परमात्मा का बोध होता है–

'दहर-स्थानमवलम्ब्योपास्य इत्यभिप्रायेण दहर-शब्द-प्रयोगो न तु वस्तु-गत्या तस्य दहरत्वमिति''''रहस्यार्थस्तु-'द' इत्यस्य 'हर' इत्यस्य च शब्द-रूपस्य चाश्रयो दर्शित-श्रुतौ दहर-शब्दस्यार्थः, न त्वल्पः''''।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जिन भक्तों के हृदय में दहरा-काश-रूपिणी रूप में स्फुरित, दीप्त, प्रकाशित होती हो, वे जीवन्मुक्त होकर संसार में ब्रह्म-ज्ञानामृत का पान करते हैं।

***

(६१०) श्रीप्रतिपन्मुख्य-राकान्त-तिथि-मण्डल-पूजिता

प्रतिपदा से 'राका' अर्थात् पूर्णिमा तक के 'तिथि'-समूह में पूजिता। पन्द्रह नित्याओं की पूजा प्रत्येक तिथि में क्रमशः होती है। प्रत्येक तिथि की एक-एक नित्या पृथक्-पृथक् है। इससे 'पञ्च-दशी' महा-विद्या का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको प्रतिपदा से पूर्णिमान्त तिथि-मण्डल में पूजते हैं, उन्हें आप परा-मण्डलेश्वरता देती हो अर्थात् वे मण्डलेश्वर होते हैं।

***

(६११) श्रीकलात्मिका

कलावाली। 'कला' से पूर्ण-कला का ही बोध होता है। 'कला' का अर्थ सामर्थ्य या शक्ति है। 'कला' से 'काम-कला' का भी तात्पर्य है। सब प्रकार की शक्तियों अथवा शक्ति-मानों की विशिष्ट कलाएँ हैं। यथा–'अग्नि' की १०, 'सूर्य' की १२, 'चन्द्र' की १६, किन्तु इन भगवती को छोड़ अन्य सभी अपूर्ण कलावाले हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको अग्नि की दस, सूर्य की बारह, चन्द्रमा की सोलह, ब्रह्मा की दस, विष्णु की दस, रुद्र की दस, ईश्वर की चार, सदा-शिव की सोलह और स्वप्न, जाग्रत, सुषुप्ति, तुरीयादि की चार कलाओं के कलात्मिका रूप में पूजते हैं, ध्याते हैं, उनके सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं और वे ज्ञान की कलाओं के कन्द बन जाते हैं।

***

(६१२) श्रीकला-नाथा

कलाओं की स्वामिनी। भगवती की आज्ञा के अनुसार ही कलाएँ अपने काम करती हैं। 'कला-नाथ'-'चन्द्रमा' का भी नाम है। इस भाव में यह 'चन्द्र'-स्वरूपा है, कारण 'श्री-चक्र' का चन्द्र-मण्डल ही स्वरूप है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जिनके पुण्य उदित होते है, जो अद्वैत-लाभ की इच्छा रखते हैं और जिन्होंने तीर्थों पर पर्व-काल में दान-जप-तपादि किया है, वे भक्त ही आप कला-नाथा को पूजते हैं, अन्य न तो प्रणाम कर पाते हैं, न स्तुति।

***

(६१३) श्रीकाव्यालाप-विमोदिनी

अठारह लक्षणों से लक्षित, रूपक-भेद से अभिन्न काव्यों के आलापों से विशेष रूप से आनन्दित होनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको काव्यालाप-विनोदिनी राज-राजेश्वरी के रूप में ध्याते हैं, पूजते हैं, वे महेन्द्रादि देवों की कृपा को प्राप्त करते हैं और अप्सराओं के गण प्रलय-पर्यन्त उनकी सेवा करते रहते हैं।

***

(६१४) श्रीस-चामर-रमा-वाणी-सव्य-दक्षिण-सेविता

चामर डुलानेवाली 'लक्ष्मी' और 'सरस्वती' क्रमशः बाँएँ और दाहिने ओर हैं। इसका सूक्ष्म या मान्त्रिक-रूप है-त्रि-वीजात्मक (ऐं ह्रीं श्रीं)। लगभग ऐसा ही ध्यान रहता है माता 'दुर्गा' का, जब शारदीय पूजा में मूर्ति का निर्माण किया जाता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिसके बाँएँ लक्ष्मी चमर डुला रही हैं और जिसके दाएँ सरस्वती चमर डुला रही हैं, उन माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और संसार में अधिकाधिक जय को प्राप्त करो।

***

(६१५) श्रीआदि-शक्ति

आदि कारण होने से 'आदि-शक्ति' कही जाती है। इससे निराकारा अनुपहित 'चेतना-शक्ति' का तात्पर्य है। धर्म-शक्ति का नहीं, धर्मी-शक्ति का ही बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जगत् के गुणों को पैदा करनेवाली, विश्व की आदि-भूता, भुवनों की ईश्वरी, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्रादि सभी देवों और यक्ष, किन्नर, असुर द्वारा पूजिता आदि-शक्ति माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और सब तरह से पूर्ण हो जाओ।

***

(६१६) श्रीअमेया, (६१७) आत्मा

जिसका 'मेय' अर्थात् प्रमेय नहीं है, ऐसी आत्मा या परमात्मा। मापने योग्य को 'मेय' कहते हैं। इसकी 'त्रि-पुटी' है–'मातृ-मेय-मान'।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! तपस्याओं, जपों, अर्चनादि से आप पूर्णतया न तो दिख सकती हो, न प्राप्त हो सकती हो। आप अमेया हो। आपका कोई मान (माप) नहीं कर सकता।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सबको व्याप्त किए हो, सबको सब कुछ देनेवाली हो, सबको अपने में विलीन करती हो और आप सदा सर्वदा सबकी सत्ता की तरह आत्मा रूप में रहती हो।

***

(६१८) श्रीपरमा

'परं-ब्रह्म माति परिच्छिनत्ति' अर्थात् पर-ब्रह्म को परिच्छिन्न करनेवाली। अथवा 'परस्य पर-शिवस्य मा लक्ष्मीर्या' अर्थात् 'पर-शिव' की लक्ष्मी अर्थात् 'शक्ति'। 'परमा' से परम उत्कृष्टा या सर्व-श्रेष्ठा का भी बोध होता है। इस भाव में 'सप्तशती-चण्डी' में कहा है–'पराणां परमा।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप परम-शिव की परमा शोभा हो। आप परों को मान-युक्त करती हो तथा आप ही में सब कुछ समाया हुआ है। आप परे-से-परे हो और आपही परमा रूप से प्रकाशित होती हो।

***

(६१९) श्रीपावनाकृति

पवित्र करनेवाली 'आकृति' अर्थात् स्वरूपवाली। 'आकृति' से शरीर, चरित और ज्ञान तीनों का बोध होता है। रहस्यार्थ है–'शुद्धा परमा विद्या'।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! पवित्र करनेवाली उन माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ, जो एक बार भी ध्यान-पथ में आने पर अन्तःकरण को प्रशान्त कर देती हैं, भीतरी तत्त्व समूह को पवित्र बना देती हैं।

***

(६२०) श्रीअनेक-कोटि-ब्रह्माण्ड-जननी

असंख्य ब्रह्माण्डों की जननी। 'ब्रह्माण्ड' यद्यपि समष्टि-पद-वाचक है, तथापि यहाँ एक 'सौर-मण्डल' का ही द्योतक है। विश्व में असंख्य ब्रह्माण्ड हैं। प्रत्येक के सूर्य, चन्द्र, ग्रह, उप-ग्रह, स्वर्ग , पाताल आदि भिन्न-भिन्न हैं। पालक-वर्ग भी भिन्न-भिन्न हैं। यहाँ तक कि ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, त्रि-शक्ति भी भिन्न-भिन्न होते हैं। इन सभी की यह जननी अर्थात् सृष्टि करनेवाली है। इससे बोध होता है कि यह भगवती ब्रह्माण्ड के अभिमानी 'विराट्', समष्टि लिङ्ग-शरीरों के अभिमानी 'स्वराट्' और दोनों के अव्याकृताभिमानी 'सम्राट्'–इन तीनों की जननी है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अनेक ब्रह्माण्डों की जननी त्रिपुर-सुन्दरी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और स्वयं स्वराट् से विराट् बन जाओ।

***

(६२१) श्रीदिव्य-विग्रहा

रमणीय स्वरूपवाली। अन्तरिक्ष में हुए को 'दिव्य' कहते हैं–'दिवि अन्तरिक्षे भवो दिव्यः।' 'विग्रह'–रण या संग्राम को भी कहते हैं। इसी अर्थ के आधार पर 'चण्डी' का वचन है–'तत्रापि सा निराधारा, युयुधे तेन चण्डिका।' 'दिव्य' से सूक्ष्म–श्रेष्ठ वासनिक-रूप का तात्पर्य है। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि १. स्थूल, २. सूक्ष्म या मान्त्रिक और ३. दिव्य या वासनिक 'विग्रह' अर्थात् तीन रूप होते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! धर्म का परिष्कार करने की इच्छा से और तत्त्वों के वेध करने की क्रीड़ा से आप अनेक वेश धारण कर नदी के समान दिव्य-विग्रहा, दिव्य देहवाली प्रकाशित होती हो। दिव्य-विग्रहा होकर आप निरन्तर दिव्य संग्राम करनेवाली भी हो।

***

(६२२) श्रीक्लीङ्कारी

काम-वीज-स्वरूपा। अथवा 'क्लीं'-वीज को उत्पन्न करनेवाली। इससे विन्दु का बोध होता है, जिससे नाद, विन्दु और वीज की उत्पत्ति होती है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! काम-देव का विमल-पूर्ण चन्द्र-कला-सा शुभ्र वीज क्लीं माता श्रीललिताम्बा से ही प्रकाशित हुआ है और जैसे शरीर-धारियों के शरीर में प्राण-कला प्रिय होती है, वैसे ही वह आपको प्रिय है। अतः तुम क्लीङ्कारी माता श्रीललिताम्बा के श्री-चरणों को पूजते हुए अपने सभी कार्यों को सफल करो।

***

(६२३) श्रीकेवला

एक-मात्र। इससे निर्द्वन्द्वता का बोध होता है अर्थात् इसके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जब न शम्भु रहते हैं, न ब्रह्मा रहते हैं और न नारायण व सूर्य-चन्द्रमा आदि ही रहते हैं, तब जगत् की कारण-रूप चैतन्य-रूपिणी केवला माता श्रीललिताम्बा ही रहती हैं। अतः तुम उनका आश्रय ग्रहण करो।

***

(६२४) श्रीगुह्या

गुप्ता। यह 'पर-ब्रह्म' की एक लक्षणा है। 'ब्रह्म-सूत्र'–'गुहां प्रविष्टावात्मानौ हि तद्-दर्शनात्' से इसी लक्षणा की सिद्धि होती है। भगवती की एक विशिष्ट रूप की संज्ञा ही 'गुह्य-काली' है। इससे बोध होता है कि भगवती अति-रहस्यार्था हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! हृदय के अवकाश-रूप आकाश में जिसे दहर कहते हैं, उस गुहा में माता श्रीललिताम्बा सदा रहती हैं, उनको ध्याओ और संसार के सभी तत्त्वों के सम्बन्ध में गोपनीय-से-गोपनीय रहस्य को जान लो।

***

(६२५) श्रीकैवल्य-पद-दायिनी

केवल मात्र के भाव को ' कैवल्य' कहते हैं। केवल-भाव धर्मि-मात्रावशेष भाव को कहते हैं। यही सर्व-श्रेष्ठ पाँचवीं मुक्ति है। अथवा 'कैवल्य-पद' की तथा अन्य पदों की भी देनेवाली है–

'कैवल्यं च पदानि च दातुं शीलमस्याः।'

'योग-शास्त्र' के अन्तिम सूत्र 'प्रतिष्ठा चिति शक्तेः' के अनुसार स्वरूप-मोक्ष का बोधक 'कैवल्य'-पद है। अन्य प्रकार की मुक्तियाँ यथा–सालोक्य, सामीप्य इत्यादि कर्म-फल-जनित हैं, अतः अनित्य है। 'कैवल्य-पद', ज्ञान-जनित होने से सर्व-श्रेष्ठ एवं नित्य है।

'शक्ति-रहस्य' के अनुसार आत्म-बुद्धि से, प्रतीकोपासना से, मातृ-भाव से, कार्मिक उपासना से, 'कैवल्य-पद' की प्राप्ति होती है–

आत्म-बुद्ध्या प्रतीकेन, मातृ-बुद्ध्याप्यहं-धिया।
कर्मणादि भजन् मर्त्यः, कैवल्य-पदमश्नुते।

संक्षेप में 'कैवल्य-पद' से परम पद का ही बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! कैवल्य मुक्ति-पद देनेवाली माता श्रीललिताम्बा को भजो और शाश्वत सदा स्थायिनी शान्ति को प्राप्त करो।

***

(६२६) श्रीत्रिपुरा

तीनों मूर्तियों (रूपों) से पुरातना अर्थात् वयस में बड़ी। अथवा तीनों पुर जिसमें हों। 'त्रिपुरार्णव' के अनुसार मन, बुद्धि और चित्त–ये ही पुर-त्रय हैं–'मनो बुद्धिस्तथा चित्तं, पुर-त्रय-मुदाहृतम्।' इन तीनों में रहनेवाली।

'गौड-पाद' के सूत्र 'तत्त्व-त्रयेण भिदा' से 'त्रिपुरा' का लक्ष्यार्थ स्पष्ट होता है। 'ज्ञान-काण्ड' में ज्ञातृ, ज्ञान, ज्ञेय ही त्रिपुर हैं। 'कालिका-पुराण' का कथन है कि सभी तीन-ही-तीन होने से 'त्रिपुरा' कहलाती है–'सर्वं त्रयं त्रयं यस्मात्, तस्मात् तु त्रिपुरा मता'। संक्षेप में यह त्रि-ब्रह्म-द्योतक है, जिसका उल्लेख उपनिषदों में मिलता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप तीनों वेदों को, तीनों वर्णों को, तीनों गुणों को, तीनों मात्राओं को अपनी कला से पूर्ण करती हो और तीनों देवों ब्रह्मा, विष्णु, महेश से पहले उदित हुई हो, इससे आप त्रिपुरा कहलाती हो। आप त्रि से पहले हो और आप त्रि को पूर्ण करती हो।

***

(६२७) श्रीत्रि-जगद्-वन्द्या

तीनों लोकों की वन्दन-योग्या। तीनों लोकों से सामान्यतः अधो-लोक अर्थात् पाताल-लोक के वासी, मध्य-लोक अर्थात् पृथ्वी के वासी और ऊर्ध्व-लोक अर्थात् स्वर्गादि के वासी सिद्ध, यक्ष, किन्नर, देव आदि का बोध होता है। रहस्यार्थ है, तीनों भाव अर्थात् प्रमाता, ज्ञाता, भोक्ता आदि, प्रमाण, ज्ञान आदि और प्रमेय, ज्ञेय आदि।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सन्ध्या समय स्थिर चित्त हो भक्ति से माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और तीनों लोकों में वन्दनीय हो जाओ।

***

(६२८) श्रीत्रि-मूर्ति

त्रै-वार्षिक कन्या-रूपत्व से त्रि-मूर्ति कही जाती है। अथवा रक्त-विन्दु, शुक्ल-विन्दु और मिश्र (रक्त-शुक्ल का मिश्रण) विन्दु-रूपी को 'त्रि-मूर्ति' कह सकते हैं। अथवा ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र, वामा, ज्येष्ठा और रौद्री या इच्छा, ज्ञान और क्रिया, या सत्त्व, रजो और तमो-गुण रूपी होने से 'त्रि-मूर्ति' संज्ञा है। अथवा शुक्ल-वर्णा शाम्भवी, रक्त-वर्णा श्रीविद्या और श्याम-वर्णा श्यामला–तीनों यही भगवती है। इसी से 'त्रि-मूर्ति' कहलाती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप ब्रह्मा, विष्णु, ईश्वर इन तीनों देवों का रूप हो। वामा, ज्येष्ठा, रौद्री ये तीनों शक्तियाँ आप ही हो। इच्छा, ज्ञान, क्रिया इन तीनों स्पन्दनों में आप ही विलसती हो। शुक्ल, रक्त, कृष्ण ये तीनों प्रभाएँ आपकी ही हैं।

***

(६२९) श्रीत्रिदशेश्वरी

त्रि-दशा मात्रवालों को 'त्रि-दश' कहते हैं। देव-गण की संज्ञा 'त्रि-दश' है। इस भाव में देवताओं की स्वामिनी है। 'त्रि-दश' से १३ का भी बोध होता है। यह विश्व-देव का द्योतक है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको देवों की ईश्वरी के रूप में हृदय में पूजते हैं और आपकी विद्या को जपते हैं, वे तीनों दशाओं में उत्कर्षवान् होते हैं।

***

(६३०) श्रीत्र्यक्षरी

तीन अक्षर या तीन वीज (वाग्, काम और शक्ति) वाली। 'वामकेश्वर तन्त्र' के अनुसार 'त्र्यक्षरी' से त्रिपुर-सुन्दरी का बोध होता है–'एवं देवी त्र्यक्षरी तु, महा-त्रिपुर-सुन्दरी।' 'गौड-पाद' के मत से 'त्र्यक्षरी' से शुद्ध-विद्या और कुमारी (बाला) का बोध होता है–'त्र्यक्षरी शुद्ध-विद्या कुमारी च।' उपनिषदों के मत से हृदय अर्थात् आत्मा और सत्य का बोध होता है–

'तदेतत् त्र्यक्षरं हृदयं। तदेतत् त्र्यक्षरं सत्यम्' (वृहदारण्यक)।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! तीन अक्षर, तीन वीज, तीन कूटवाली माता श्रीललिताम्बा को भजो और ज्ञान, प्रभुता व मोक्ष को प्राप्त करो।

***

(६३१) श्रीदिव्य-गन्धाढ्या

सुन्दर गन्ध से परिपूर्णा। 'दिव्य' से अलौकिक का और 'गन्ध' से सम्बन्ध का तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको दिव्य गन्धवाली रूप में पूजते हैं, वे प्रतिज्ञावान् और सदा आनन्दित रहते हुए जय पाते हैं।

***

(६३२) श्रीसिन्दूर-तिलकाञ्चिता

सिन्दूर के तिलक से अञ्चिता अर्थात् युक्ता। अथवा 'सिन्दूर-तिलका' अर्थात् स्त्री-गण से 'अञ्चिता', परिवृता। फिर गज-गामिनी भी अर्थ है क्योंकि 'अञ्चु' धातु का प्रयोग गति-अर्थ में भी है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! तपे हुए स्वर्ण के समान लाल वर्णवाली, जपा-पुष्प जैसे लाल वस्त्र पहननेवाली माता श्रीललिताम्बा को अपने हृदय में सदा भावित करो और विघ्न-बाधाओं पर विजय प्राप्त करते हुए, संसार के मर्म को जान लो।

***

(६३३) श्रीउमा

पार्वती। रहस्यार्थ है-'उं पर-शिवं माति परि-छिनत्ति।' अथवा शिव की लक्ष्मी अर्थात् शक्ति-'उकारः शिवः तस्य मा लक्ष्मीः।' अथवा 'उ' से उत्तम और 'मा' से चित्त-वृत्ति का तात्पर्य है, जिससे 'उमा' का अर्थ है-'उत्तमा चित्त-वृत्ति'।

'कन्या-प्रकरण' में 'उमा' से छः वर्ष की कुमारी का बोध होता है।

'शिव-सूत्र' के अनुसार 'उमा' से इच्छा-शक्ति का तात्पर्य है-'इच्छा-शक्तिरुमा कुमारी।'

'महा-वाशिष्ठ' के अनुसार 'उमा' से 'ॐकार' की सार-शक्ति का बोध होता है-'ॐकार-सार-शक्तित्वादुमेति परिकीर्तिता।'

'ब्रह्म-सूत्र' के शक्ति-भाष्यकार के मत से 'ब्रह्म' और 'उमा' एक शब्दार्थ हैं। देखिए 'उमाऽधिकरण'।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप शिव की शोभा हो, लक्ष्मी हो, कान्ति हो। आप सर्वत्र शिव का मान करती हो, सभी लोकों में आपकी ही कान्ति है।

***

(६३४) श्रीशैलन्द्र-तनया

पर्वत-राज हिमालय की कन्या। इसकी पर्याय-वाचक संज्ञाएँ हैं-अद्रिजा और हैमवती, जिनसे 'ब्रह्म' का ही बोध होता है। 'कठोपनिषद्' में इसका प्रतिपादन है। 'केनोपनिषद्' में स्पष्ट लिखा है कि-तस्मिन्नेवाकाशे स्त्रियमाजगाम बहु-शोभमानामुमां हैमवतीम् (३।१२)।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! तपस्याएँ कर शरीर को क्लेशित न करो। यज्ञ-यज्ञादि कर धन को वृथा नष्ट न करो। यदि मनोवाञ्छा पूरी करना चाहते हो, तो शीघ्रातिशीघ्र वरदान देनेवाली महा उदार माता श्रीललिताम्बा को हिम-शैल-राज की पुत्री के रूप में सदा ध्याओ-भजो।

***

(६३५) श्रीगौरी

गौर-वर्णवाली। गोरे शब्द (गुरी उद्यमने) की व्युत्पति है–'गुरते उद्युक्ते मनो अस्मिन् इति गौरः।' इससे यह अर्थ है कि वह वस्तु, जिसके हेतु (प्राप्ति में) उद्योग अर्थात् श्रम करना होता है। अतः यह संज्ञा श्रेष्ठ पद-वाचक है। अथवा यह निर्मल-वाचक है, जिससे ब्रह्म का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! कपूर, कुन्द, मोगरा, हिम, हंस, मृणाल, कमल-दण्ड-सूत्र जैसी गौर-प्रभा के समान गौर वर्णवाली तथा हिमालय के शिखर पर विराजमान, श्वेत वस्त्र पहननेवाली, श्वेत चन्दन और श्वेत मोतियों के भूषण धारण करनेवाली गौरी माता श्रीललिताम्बा को चिर-काल तक हृदय में ध्याओ।

***

(६३६) श्रीगन्धर्व-सेविता

'गन्धर्व' से दिव्य-गान का तात्पर्य है। दिव्य-गान से मधुर-से-मधुर अनाहत-ध्वनि का बोध होता है। 'गन्धर्व'-शब्द के अनेक अर्थ हैं–घोड़ा, श्रेष्ठ पुरुष, कोयल, हिरन आदि। प्रथम अर्थ से '**अश्वारूढ़ा देवी**' का बोध होता है। द्वितीय अर्थ से '**ब्रह्म**' का बोध होता है क्योंकि श्रेष्ठ पुरुष सर्व-श्रेष्ठ सत्ता का ही '**सेवन**' अर्थात् आराधन करते हैं। तीसरे अर्थ में '**कामेशी**' अर्थात् रति देवी का बोध होता है क्योंकि जहाँ मदन या काम या कामेशी हैं, वहीं वसन्त है और जहाँ वसन्त है, वहीं कोकिल-समूह है। हिरन चञ्चलता के कारण '**मन**' का द्योतक है। इससे '**चित्त-वृत्ति-सेविता**' है, ऐसा बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! विश्वावसु आदि गन्धर्व-गण जिसे सदा ध्याते-पूजते हैं, जो दिव्य मन्दार पारिजात के पुष्पों की माला धारण करती हैं, उन माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और सभी दुखों का तिरस्कार करते हुए गन्धर्व-गान से अपने को तृप्त करो।

***

(६३७) श्रीविश्व-गर्भा

विश्व जिसके गर्भ में हो, वह। इससे '**विश्व-प्रसविनी**' और '**विश्व-व्यापिनी**' का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! बड़े-से-बड़ा सम्पूर्ण विश्व आपके गर्भ में है। आप सभी बड़ों से अधिकाधिक बड़ी हो। आप विश्व-गर्भा को जो भक्त हृदय में धारण करते हैं तथा आपके गुण गाते हैं, उन्हें सभी नित्य प्रणाम करते हैं।

***

(६३८) श्रीस्वर्ण-गर्भा

हिरण्य जिसके गर्भ में हो। हिरण्य-गर्भ से ब्रह्मा का तात्पर्य है। ब्रह्मा–इच्छा-शक्ति-स्वरूप हैं। इस प्रकार इच्छा-शक्ति-शालिनी का बोध होता है। अथवा 'स्वर्ण' (सु+अर्ण) अर्थात् अक्षरों का 'गर्भ' अर्थात् शोभा जिसमें हो, वह। इस प्रकार मातृका-प्रतिपाद्या है। अथवा 'स्वर्ण' से सुन्दर मन्त्रों का भी बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिससे अति सुन्दर वर्ण विलसित होते हैं, जिसमें शुभ अक्षर हैं, जो सु-उत्तमा वर्णों की कान्तिवाली हैं, उन स्वर्ण-गर्भा जगन्माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और सभी प्रकार के दारिद्रय से मुक्त हो जाओ।

***

(६३९) श्रीअवरदा

'अवर' का अर्थ है–अनार्य या असुर, इनका खण्डन करनेवाली–'द्युति खण्डयति।' अथवा ' व' अर्थात् कान्तिवाले, 'रदा' अर्थात् दाँतोंवाली–'अवन्ति इव अवाः कान्ति-मन्तो रदा दन्ता यस्याः।'

◆◆प्रार्थना◆◆

जो नीच आशयवाले, नीच कर्म करनेवाले दानवों को नष्ट करती हैं, जो धर्म की सम्यक् रक्षा करने का व्रत धारण किए हुए हैं, वे श्रीसुन्दरी अवरदा माता श्रीललिताम्बा मेरे ऐश्वर्य की वृद्धि करें।

***

(६४०) श्रीवागधीश्वरी

'वाक्' की अधीश्वरी अर्थात् श्रेष्ठ स्वामिनी। 'वाक्-शक्ति' की व्याख्या पहले हो चुकी है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको वाणी की ईश्वरी समझकर, भक्ति-पूर्वक वाग्-वीज को जपता हुआ रात्रि में श्वेत उपचारों से पूजता है, ध्याता है, वह अगाध ज्ञान-विज्ञान का निधान बन सर्वत्र प्रसिद्ध हो जाता है।

***

(६४१) श्रीध्यान-गम्या

ध्यान से ज्ञात होनेवाली। ध्यान का अर्थ है–विभावन अर्थात् विशिष्ट भावना। यह बोधैक-गम्या है, तात्पर्य कि यह और किसी युक्ति से नहीं जानी जा सकती। 'श्रुति' भी कहती है कि–

'ते ध्यान-योगानुमता अपश्यन् देवात्म-शक्तिं स्व-गुणैर्निगूढाम्।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! रति के रूप से अधिक रमणीय और किसी से भी दमन के योग्य नहीं तथा देवों से प्रणाम किए जानेवाली, ध्यान से प्राप्य आपको सौभाग्यशाली उदान मनवाले भक्त ही भज पाते हैं।

***

(६४२) श्रीअपरिच्छेद्या

अभाव-प्रतियोगित्व को परिच्छेदत्व कहते हैं। देश और काल इन्हीं दोनों का मुख्यतया परिच्छेद है। यही अत्यन्ताभाव है। परिच्छेद की पर्यायवाची संज्ञा है–आवरण। अतः शुद्ध अर्थात् अमिश्र या अनुपहित चेतना का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जब आप उल्लसित होती हो, विकास पाती हो, तब आपके गुण ब्रह्मादि देवों से वर्णन करने योग्य हो जाते हैं और जब आप सङ्कोच को प्राप्त होती हो, तब आप अपरिमेया, अपरिच्छेद्या होती हुई, हे शिवे! बुद्धि, तर्क, मन और वाणी से भी अवर्णनीय हो जाती हो।

***

(६४३) श्रीज्ञानदा

'ज्ञानं ददाति या' अर्थात् ज्ञान देनेवाली। अथवा 'ज्ञानं द्युति खण्डयति वा' अर्थात् ज्ञान या अयथार्थ ज्ञान का खण्डन करनेवाली। ज्ञान-खण्डन के भाव में 'ज्ञान' से बन्धन का तात्पर्य है, जैसा 'शिव-सूत्र'–'ज्ञानं बन्धः' से स्पष्ट है। इसी सूत्र का वार्तिक इस तथ्य को और भी स्पष्ट करता है–

अन्तः-सुखादि संवेद्य, व्यवसायादि-वृत्तिमत्।
बहिस्तद्-योग्य-नीलादि-देहादि-विषयोन्मुखम्।
भेदाभासात्मकं चास्य, ज्ञानं बन्धोनुरूपिणः।
तत् प्राशितत्वादेवा सा, वेणुः संरसति ध्रुवम्।

◆◆स्तुति◆◆

हे ज्ञान देनेवाली माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपके चरण-कमलों में नवीन पुष्पों को भक्ति-पूर्वक आपके सहस्र-नाम के साथ समर्पित करते हैं, उनके हृदय में ज्ञान की वल्ली उग आती है।

***

(६४४) श्रीज्ञान-विग्रहा

ज्ञान-रूपिणी। इससे समस्त विश्व के ज्ञानात्मकत्व का बोध होता है। ज्ञान-मात्र से ही सब वस्तुओं की स्थिति है-

ज्ञानमेव परंब्रह्म, ज्ञानं बन्धाय चेष्यते। ज्ञानात्मकमिदं विश्वं, न ज्ञानाद् विद्यते परम्।

अथवा 'विग्रह' का अर्थ विस्तार भी है। इस भाव में अर्थ है कि जिससे ज्ञान का विस्तार होता है अर्थात् महा-विद्या।

◆◆प्रार्थना◆◆

ज्ञान ही जिनकी मूर्ति है, वे ज्ञान-विग्रहा परा परमेश्वरी माता श्रीललिताम्बा शीघ्र ही मुझे प्रबोध देवें।

***

(६४५) श्रीसर्व-वेदान्त-संवेद्या

सब वेदों के सिद्धान्तों के प्रतिपादन करनेवाले अर्थात् उपनिषदों से भली प्रकार से ज्ञात होनेवाली-

एषा त्रिशक्तिरुद्दिष्टा, नय-सिद्धान्त-गामिनी। एषा ज्ञानात्मिका शक्तिः, सर्व-वेदान्त-गामिनी।।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! वेदान्त उपनिषत् समूह से सम्यक् प्रकार से जानने योग्य माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो, यदि वे हृदय में उदित हो जाएँगी, तो नाना प्रकार के तपों, व्रतों से मुक्ति हो जाएगी।

***

(६४६) श्रीसत्यानन्द-स्वरूपिणी

सत्य और आनन्द-स्वरूपिणी अथवा सत्य जो आनन्द है अर्थात् नित्य व यथार्थ आनन्द-स्वरूपिणी दोनों का बोध होता है। अथवा 'सत्य' से प्राणों का और 'आनन्द' से आदित्य का बोध होता है-'सदिति प्राणस्त्वानन्द-मयमित्यसावादित्यः।' अथवा इससे 'सत्य-भामा' का भी बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सत्य और आनन्द ही जिनका स्वरूप है, उन परापरा ईश्वरी माता श्रीललिताम्बा की शरण ग्रहण करो और सच्चे अद्वय आनन्द को प्राप्त करो।

***

(६४७) श्रीलोपामुद्रार्चिता

'लोपामुद्रा' एक विशेष विद्या का नाम है। 'श्री-क्रम' की एक विशेष शक्ति हैं 'लोपामुद्रा', जो तृतीय खण्ड की प्रतिपाद्या हैं। अगस्त्य की पत्नी 'लोपामुद्रा' की आराधिता (त्रिपुरा-सिद्धान्त)।

◆◆स्तुति◆◆

हे लोपामुद्रा से पूजिता माता श्रीललिताम्बा! आप क्षेम, आरोग्य, सुख, श्री, विद्या, कान्ति-सभी मनोरथ भक्तों को दया से अतिशीघ्र देती हो। अतएव रात्रि में प्रमुदित मन से, भक्त-गण आपकी श्रेष्ठ विद्या के तृतीय कूट को मातृका पर जपते हुए आपको पूजते हैं।

***

(६४८) श्रीलीला-क्लृप्त-ब्रह्माण्ड-मण्डला

'लीला' अर्थात् अनायास अथवा क्रीड़ा के कारण ब्रह्माण्ड-समूह जिसमें 'क्लृप्त' हों, वह। इससे विश्व-रूपिणी और लीला-मयी का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त लीला मात्र से ब्रह्माण्ड बना देनेवाले स्वरूप में आपको ध्याते हैं, भजते हैं, वे स्वयं भी ऐश्वर्यवान् हो जाते हैं।

***

(६४९) श्रीअदृश्या

चर्म-चक्षु या स्थूल चक्षु से न देखी जा सकनेवाली। दृश्य-विलक्षणता के कारण ऐसा नाम है। 'अदृश्यत्व'-ब्रह्म की एक लक्षणा है-'न द्रष्टेर्द्रष्टारं पश्येत्' (श्रुति)। 'ब्रह्म-सूत्र' के अदृश्यत्वाधिकरण का मनन करने से इसका बोध होता है। 'श्रुति' कहती है-

यच्चक्षुषा न पश्यति, येन चक्षूंषि पश्यति। तदेव ब्रह्मत्वं विद्धि-(केनोपनिषत् १६)

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप देखने योग्य हो, तो भी अदृश्या हो। चक्षु आदि इन्द्रियों से दृश्या नहीं हो। जगत् का नियन्त्रण करनेवाली हे पराम्बिके! मीमांसकों के अदृष्ट के समान और सांख्यवालों के प्रधान के समान आप भासित होती हो।

***

(६५०) श्रीदृश्य-रहिता

व्यावहारिक भाव से रहिता। इसका कारण है इसकी सूक्ष्मता अर्थात् पारमार्थिक भाव-तत्त्व। इससे निर्विषया संवित् या परा संवित् का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप विषय-रहिता, संवित् के समान हो। आप दृश्यों को नवीन-सा दिखाती हो और शीघ्र ही उसे अस्थायी रूप से प्रवर्तमान तथा परिवर्तित भी कर देती हो।

***

(६५१) श्रीविज्ञात्री

विशेष जाननेवाली। 'श्रुति' भी कहती है कि-'विज्ञातारमनेकेन विजानीयात्।' इससे सर्वज्ञत्व का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप ही समस्त विश्व की विज्ञात्री अर्थात् विशेष रूप से जानने वाली हो। आपको किससे जाने कि आप ही लोकों को बनानेवाली धात्री अर्थात् धारण करनेवाली हो।

***

(६५२) श्रीवेद्य-विवर्जिता

जिसे कोई जानने योग्य पदार्थ नहीं है अर्थात् ऐसा कोई पदार्थ नहीं है, जिसे यह भगवती जानती न हो।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सबकी ईश्वरी हो। आप सर्वज्ञ हो। संसार में आपके लिए कोई वेद्य अर्थात् जानने योग्य नहीं है।

***

(६५३) श्रीयोगिनी

स्त्री योगी। योग से एकत्व-भावना का बोध होता है। एकत्व-भावना अर्थात् मेलन का भाव वैसे तो दो पदार्थों के एकीकरण का द्योतक है, परन्तु यहाँ मुख्यतः चित् और अचित्, सत् और असत्, शक्ति और शिव आदि का ही बोध होता है। अथवा मन्त्र-शास्त्र-कथित डाकिनी आदि सातों योगिनी-रूपा। अथवा ज्योतिष-शास्त्र-कथित मङ्गला आदि आठों योगिनी-रूपा। अथवा 'योग' से विषय-सङ्ग-भोग का भी तात्पर्य है। यह भाव भी युक्त है क्योंकि भोक्त्री ब्रह्म-रूपिणी भगवती ही है, अन्य कोई नहीं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! एकत्व भावना-रूप योग को देनेवाली माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और अपनी चञ्चल चित्त-वृत्ति को रोकने में समर्थ होकर, योग-साधना करो तथा संसार को योग के प्रयोग दिखाओ।

***

(६५४) श्रीयोगदा

योग की देनेवाली अर्थात् करानेवाली। इससे 'विद्या' और 'अविद्या' दोनों का बोध होता है। 'ब्रह्म' से योग करानेवाली विद्या और 'विषय' से योग करानेवाली अविद्या है। दोनों ही भगवती हैं। 'चण्डी सप्तशती' में भी महा-माया और महा-मेधा, महा-देवी और महा-सुरी इत्यादि कही गई हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! माता श्रीललिताम्बा इन्द्रियादि-दमन-रूप यमवालों को योग प्रदान करती हैं और कुत्सित वासनावालों के योग को खण्डित करती हैं। अतः कुत्सित वासनाओं के त्याग के प्रति सतत प्रयत्नशील रहो।

***

(६५५) श्रीयोग्या

मेलन-योग्या अथवा योग्यतावाली। योग्यता से पूर्ण योग्यता अर्थात् **पूर्ण-शक्ति-मती** का बोध होता है। यहाँ **एकत्व-भावना** के योग्यत्व से ही तात्पर्य है।

जिस प्रकार '**योगिनी**' से भोक्त्री का, '**योगदा**' से भोग-प्रदा का बोध होता है, उसी प्रकार '**योग्या**' से भोग्या का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! उपासना के लिए माता श्रीललिताम्बा ही योग्या हैं। उन्हें ध्याओ-भजो और अपने अन्दर आनन्द-रूपिणी योग्या माता श्रीललिताम्बा को देखते हुए, योग-सिद्धि और मन्त्र-सिद्धि को प्राप्त करो।

***

(६५६) श्रीयोगानन्द-युग-धरा

'**योग**' अर्थात् **शिव-शक्ति-सामरस्य** के '**आनन्द**' के कारण '**युग**' अर्थात् युगल (दोनों) भाव की धारण करनेवाली। तात्पर्य यह कि **शुद्ध-शक्ति-भाव** की होती हुई भी **शिव-तत्त्व** की **धारण-कर्त्री** हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अपने चित्त-रूपी हाथी को विश्व की वृद्धि करनेवाली, विश्व का भार धारण करनेवाली माता श्रीललिताम्बा के श्रीचरण-रूप आलान से दृढ़ भक्ति-रूप साँकल से बाँध दो और फिर योग के आनन्द से आप्लावित हो जाओ।

***

(६५७) श्रीइच्छा-शक्ति-ज्ञान-शक्ति-क्रिया-शक्ति-स्वरूपिणी

इच्छा, ज्ञान और क्रिया-शक्ति अर्थात् गुण-स्वरूपवाली। इन तीनों गुणों से ही इसके स्वरूप का भाव है। '**सङ्केत-पद्धति**' में कहा गया है कि-'**इच्छा**' का शिर-प्रदेश, इसके नीचे का भाग '**ज्ञान**' का और कमर के नीचे पैर तक '**क्रिया-शक्ति**' का बना है। '**वामकेश्वर तन्त्र**' भी कहता है कि-'**त्रिपुरा देवी ब्रह्मा-विष्णु-महेश तीनों स्वरूपा हैं।**'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपने शक्ति के तीन स्वरूपों इच्छा, ज्ञान, क्रिया को धारण किया है। जो भक्त आपको तीन शक्ति रूपवाली महा-माया के रूप में ध्याते हैं, उनका सब कुछ शुभ ही होता है।

***

(६५८) श्रीसर्वाधारा

'सर्वस्य आधारा' अर्थात् सबकी आधार-स्वरूपा। **'सर्व'** से विश्व का तात्पर्य है। **'आधार'** का तात्पर्य मूल हेतु से है। अथवा **'सर्वासां धारा परम्परा'** अर्थात् विश्व-परम्परा-भाव। इससे जन्य-जनक का अभेद सिद्ध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप अपार अमृत-रस के समुद्र-सी परम रमणीय मूर्ति हो। आप जगत् के सभी दिव्य तेजों की आधार-रूपा सुखों की सार हो।

***

(६५९) श्रीसु-प्रतिष्ठा

सुन्दर प्रतिष्ठा। प्रतिष्ठा से जगत् के अधिष्ठान का बोध होता है। अथवा 'सु-प्रतिष्ठा' नाम के बीस अक्षर के छन्द-विशेष के रूपवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपने विश्व को विस्तृत किया है। आप ही सम्पूर्ण विश्व की प्रतिष्ठा हो और विश्व आप में ही प्रतिष्ठित है। जो भक्त इस रूप में आपको ध्याते हैं, वे लोक में प्रतिष्ठा पाते हैं।

***

(६६०) श्रीसदसद्-रूपिणी

सत् और **असत्** दोनों रूपवाली। यही रूप **पूर्ण ब्रह्म** का है। यदि केवल **सत्** मात्र को **ब्रह्म** मानते हैं, तो **असत्** पदार्थ उससे बाहर (अतिरिक्त) होता है, जिससे **ब्रह्म** की पूर्णता और निर्द्वन्द्वता में बाधा पहुँचती है। **'माया-वाद'** का भी समाधान युक्त नहीं है क्योंकि माया को, जिससे प्रपञ्च है, सत् भी नहीं और **असत्** भी नहीं कहा है; **अनाख्य** माना है।

'शाक्त-वेदान्त' ही एक ऐसा दर्शन है, जो **अपरिणामिनी सत्ता** को **उभय-परिणामिनी सत्ता** मानकर इस कण्टकाकीर्ण समस्या का समाधान करता है। इसका समर्थन **भगवान् कृष्ण** ने **'गीता'** में किया है-**'सदसच्चाहमर्जुन'** अर्थात् सत् और असत्, हे अर्जुन! मैं ही हूँ।' **'महा-वाशिष्ठ'** का भी यही सिद्धान्त है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप पर और सत् हो। आपसे जो भिन्न है, वह असत् है। इस कारण विद्वानों की बुद्धि में आप सदसद्-रूप-धारिणी प्रकाशित होती हो। धर्म की रक्षा के लिए जगत् का कल्याण उल्लासित करती हुई, आप प्रकट होती रहती हो।

***

(६६१) श्रीअष्ट-मूर्ति

आठ रूपवाली। 'योग-शास्त्र' के मत से गुण-भेद के आधार पर आत्मा के आठ प्रकार हैं–१. जीवात्मा, २. अन्तरात्मा, ३. परमात्मा, ४. निर्मलात्मा, ५. शुद्धात्मा, ६. ज्ञान-रूपात्मा, ७. महात्मा और ८. भूतात्मा अर्थात् अष्ट-प्रकृति-रूपा।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप मूल-प्रकृति हो। १. लक्ष्मी, २. मेधा, ३. धरा, ४. पुष्टि, ५. गौरी, ६. तुष्टि, ७. प्रभा और ८. धृति–आपकी आठ मूर्तियाँ हैं। अथवा १. जीवात्मा, २. अन्तरात्मा, ३. परमात्मा, ४. निर्मल, ५. शुद्धात्मा, ६. ज्ञान-रूपात्मा, ७. महात्मा और ८. भूतात्मा–आठ आत्मा-रूपी आपकी मूर्तियाँ हैं। अथवा १. भूमि, २. अप्, ३. तेज, ४. वायु, ५. आकाश, ६. सूर्य, ७. चन्द्रमा और ८. यजमान–आपकी आठ मूर्तियाँ हैं। जो भक्त इन आठ रूपों में आपको ध्याते हैं, भजते हैं, वे चमकते रत्न की तरह सर्वत्र शोभा पाते हैं।

***

(६६२) श्रीअजा

जन्म या उत्पत्ति से रहिता। 'अजा'-पद ब्रह्म-वाचक है। इससे 'नित्या' सत्ता का बोध होता है–'अजामेकां लोहित-शुक्ल-कृष्णाम्' (श्रुति) इत्यादि।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि दिव्य पर-प्रकाश को हृदय में देखना चाहते हो, तो दिन-रात अजा अर्थात् नित्या भगवती माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो।

***

(६६३) श्रीजैत्री

जीतनेवाली। इससे जिस प्रकार अविद्या या अहन्ता-भाव को जीतनेवाली 'पराहन्ता' का बोध होता है, उसी प्रकार ज्ञान को जीतनेवाली महा-मोहा का बोध होता है। इस भाव के ही आधार पर कहा है कि (सप्तशती)-

ज्ञानिनामपि चेतांसि, देवी भगवती हि सा। बलादाकृष्य मोहाय, महा-माया प्रयच्छति।।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि अपार माया के समुद्र को एक ही वेग में तैरना चाहते हो, तो अविद्या को जीतनेवाली उमा-रूपिणी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो।

***

(६६४) श्रीलोक-यात्रा-विधायिनी

चतुर्दश 'लोक' या विश्व की 'यात्रा' अर्थात् संरक्षण अथवा संहरण करनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! लोक-यात्रा-विधायिनी अर्थात् संसार के सभी योग-क्षेमादि व्यवहार को सविधि पूर्ण करनेवाली माता श्रीललिताम्बा को प्रेम से नित्य भजो और सभी प्रकार की चिन्ता को वृथा समझकर उनका परित्याग करो।

***

(६६५) श्रीएकाकिनी

अकेली। 'देवी-पुराण' में इसकी परिभाषा है–

एकैव लोकान् ग्रसति, एकैव स्थापयत्यपि।
एकैव सृजते विश्वं, तस्मात् एकाकिनी मता।।

अर्थात् अकेली विश्व का संहरण, पालन और सृजन करती है। इसी से इसे 'एकाकिनी' कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! प्रपञ्च के समय कर्म और काल के सहित समस्त विश्व-जाल को अर्थात् विश्व के सभी चराचरों को, जिसे आप अपने से ही प्रकट करती हो, उसे आप अपने में ही वापस समेट लेती हो।

***

(६६६) श्रीभूम-रूपा

सुख-रूपा। सुख से पर-सुख का ही, जो नित्य है, बोध होता है। 'भूमा' से ब्रह्म का बोध होता है–'यो वै भूमा तत् सुखम्।' 'ब्रह्म-सूत्र' के भूमाधिकरण का ऐसा ही सिद्धान्त है। 'भूमा' के अनेक अर्थ हैं–आत्मा, प्राण, बहुत्व आदि। इसी से 'श्रुति' कहती है कि 'भूमा' की विशेष रूप से जिज्ञासा करो–'भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्यः' (छान्दोग्य–७-२३-४)। संक्षेप में 'भूम'–पदार्थ तत् सत्ता के उप-पादक सत्तावान् का द्योतक है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अनेक रूपोंवाली भूमा-रूपिणी माता श्रीललिताम्बा को चारों सन्ध्याओं में ध्याओ-भजो और आठों सिद्धियों अणिमा, महिमा आदि को प्राप्त करो।

***

(६६७) श्रीनिर्द्वैता

द्वैत-रहिता। द्वैत-दर्शन के अनित्य-विषयक प्रतिपादन के हेय अर्थात् तुच्छ या अयुक्त होने से निर्गत द्वैत सिद्धान्त है जिसका।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपसे विद्या और अविद्या दोनों निकली हैं। जीव और ईश्वर दोनों आप ही से प्रकट हुए हैं। अतः आपको जो भक्त द्वैत-रहित ध्याते हैं, वे निर्द्वन्द हो शिव हो जाते हैं।

***

(६६८) श्रीद्वैत-वर्जिता

पूर्व-संज्ञा का समर्थन करनेवाला यह नाम है, जिसमें मूल अद्वैत-भाव का बोध होता है। भगवती ने स्वयं कहा है–'**एकैवाहं जगत्यत्र, द्वितीया का ममापरा**' (सप्तशती)। इससे सार्वकालिक द्वैत के अभाव का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको द्वैत-हीन योग-शक्ति के रूप में अपने भीतर ध्याते हैं और मानसिक उपचारों से पूजते हैं, वे मृत्यु पर विजय प्राप्त करते हैं तथा जीवन्मुक्त हो जाते हैं।

***

(६६९) श्रीअन्नदा

अन्न को देनेवाली अर्थात् विश्व का पालन करनेवाली। ब्रह्मा को अन्न-दाता कहते हैं– '**तपसा चीयते ब्रह्म, ततोऽन्नमभिजायते**' (मुण्डक) और '**तस्मादेतद् ब्रह्म नाम, रूपमन्नं च जायते।**'

'**श्रुति**' ने अन्न का महत्त्व बहुत बड़ा निश्चित किया है। अन्न-रूप '**ब्रह्म**' की उपासना भी बताई गई है–'**येऽन्नं ब्रह्मोपासते**' (तैत्तरीय)। अन्न से ही भूतों की उत्पत्ति और संरक्षण है–'**अन्नाद् भूतानि जायन्ते। जातान्यन्नेन वर्धते।**'

अन्न की श्रौत परिभाषा है–'**अद्यतेऽत्ति च भूतानि, तस्मादन्नं तदुच्यते।**'

अन्न से **प्राण** का भी बोध होता है–'**प्राणो वा अन्नम्**' (श्रुति)। प्राण क्या, ब्रह्म अन्न ही है– '**अन्नं ब्रह्मेति व्याजनात्।**' इस भाव में '**अन्नदा**' का अर्थ है ब्रह्म-ज्ञान को देनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

स्तुति करते हुए शिवादि देवों को जो सदा दान देने में तत्पर हैं, वे रत्नादि की तरह प्रकाशमान माता श्रीललिताम्बा हमारी सदा रक्षा करती रहें।

***

(६७०) श्रीवसुदा

धन या रत्न को देनेवाली। 'वसु' पदार्थ-वाचक भी है। इस भाव में पारमार्थिक पदार्थ को देनेवाली है। 'वसु'-दान का तात्पर्य 'वृहदारण्यक' की उक्ति से स्पष्ट होता है–

'स वा एष महानज आत्मान्नादो वसु-दानो विन्दते वसु य एवं वेद।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त रात्रि में आपको विल्व-पत्रों से पूजते हुए, भुवनेश्वरी मन्त्र को जपते हैं, वे आप वसुदा से गौ, भूमि, स्वर्ण, वस्त्र, भूषण-रत्नादि पाते हैं।

***

(६७१) श्रीवृद्धा

बूढ़ी। 'श्रुति' भी कहती है–'त्वजीर्णा (वृद्धा) दण्डेन वञ्चसि (गच्छसि)।'

वृद्धा से सर्व-ज्येष्ठा या आद्या का बोध होता है। इसकी एक व्युत्पत्ति यह भी है–'वर्धयति जगत् इति वृद्धा (णिजन्तात् कर्तरि क्तः)' अर्थात् विश्व को बढ़ानेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप लोक-समुदाय से पूर्व प्रगट हुई हो और अपनी कला से लोकों की सब तरह से वृद्धि कर रही हो तथा लोक-नायकों ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि से भी ज्येष्ठा बड़ी हो एवं बुद्धि को देनेवाली हो। इस कारण आप सबसे वृद्धा हो।

***

(६७२) श्रीब्रह्मात्मैक्य-स्वरूपिणी

ब्रह्म अर्थात् परमात्मा और आत्मा अर्थात् जीवात्मा दोनों का ऐक्य ही जिसका स्वरूप हो, वह। अथवा उक्त दोनों का ऐक्य करनेवाले 'हंस'-मन्त्र स्वरूपिणी।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जीव और ईश्वर की एकता तथा प्रकृति और पुरुष की एकता अपनी इच्छा से कराती हो। अतएव अद्वैत-प्रेमी भक्तों से निशा समय हृदय-कमल में पूजी जाती हो और आप करुणा की समुद्र ही उनको मोक्ष हेतु तत्त्व-ज्ञान प्रदान करती हो।

***

(६७३) श्रीवृहती

बड़े-से-बड़ी। इसका पर्याय-वाचक 'श्रौत' पद है–'महतो महीयान्।' अथवा 'वृहती'-छन्द-रूपा, जो छत्तीस अक्षर का है। गीतोक्त वचन–'वृहत् साम तथा साम्नाम्' से 'बृहती' छन्द का ही बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! ३६ तत्त्वों के समान ३६ वर्णों (वृहती गायत्री) को धारण करने के कारण आप बड़ों से भी बड़ी हो। सबसे बड़ी होने से और व्योम से भी अत्यन्त

विशाल होने से आप वृहती हो। आपके वृहती नाम का भाव जानते हुए जो भक्त आपकी भावना मन-ही-मन करते हैं, वे योग, विद्या, बल, वैभव से पूर्ण हो जाते हैं और सर्वत्र बड़ाई पाते हैं।

***

(६७४) श्रीब्राह्मणी

ब्राह्मण की स्त्री या शक्ति। ब्राह्मण से ब्रह्म-ज्ञानी का बोध होता है, जाति विशेष का नहीं। यहाँ ब्राह्मण से शिव का बोध होता है, जिससे बढ़कर ब्रह्म-विद् और कोई नहीं। 'छान्दोग्य श्रुति' कहती है-'तं वै देवेषु ब्राह्मणोऽसि'''।' 'स्मृति' भी कहती है-

ब्राह्मणो भगवान् साम्बो, ब्राह्मणानां हि दैवतम्। विशेषाद् ब्राह्मणो रुद्रमीशानं शरणं व्रजेत्।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप पर-ब्रह्म परमात्मा सदा-शिव की शक्ति ब्राह्मणी हो। जो भक्त ब्राह्मणी के स्वरूप में आपको हृदय में भावित करते हैं, वे ब्रह्म-विद् हो जाते हैं।

***

(६७५) श्रीब्राह्मी

ब्रह्म-सम्बन्धी या ब्रह्मात्मिका। अथवा वागात्मिका। इससे मेधा-शक्ति का भी बोध होता है। इस नाम की एक जड़ी भी होती है, जिसके सेवन से मेधा-शक्ति या स्मरण-शक्ति की वृद्धि होती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कपूर, कुन्द पुष्प, हिम, मोतियों का हार और मृणाल के समान गौर वर्णवाली मूर्ति के रूप में आपको जो भक्त ध्यान से हृदय में निहारते हैं और चन्द्र-विन्दु-संयुक्त अधरौष्ठ-वर्ण ऐङ्कार को जपते हैं, वे भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त करते हैं तथा ब्राह्मी, सरस्वती-सम्बन्धी कला-ज्ञानादि को प्राप्त करते हैं।

***

(६७६) श्रीब्रह्मानन्दा

ब्रह्मानन्दवती। इससे 'सगुण ब्रह्म' का बोध होता है। अथवा ब्रह्म का आनन्द ही स्वरूप है जिसका, वह।

◆◆प्रार्थना◆◆

जिस प्रकार सूर्य-बिम्ब के भीतर झिलमिलाता हुआ तेज दिखाई पड़ता है, उसी प्रकार ब्रह्म का अन्तर्विलास करनेवाली आनन्द-रूपा श्रीललिताम्बा हमारे शाश्वत सुख और कल्याण के लिए हों।

***

(६७७) श्रीबलि-प्रिया

बलि को पसन्द करनेवाली। बलि से साधारणतया पूजोपहार का तात्पर्य है, परन्तु इसका रहस्यार्थ है त्याग, जिससे अविद्या का निरास होता है। पशु-भाव अर्थात् द्वैत-भाव की बलि ही यथार्थ बलि है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त दिन व रात्रि में उपांशु अर्थात् कण्ठ में ही अक्षर आते-जाते रहें, इस प्रकार से आपके मन्त्र को नित्य जपते हैं और बलि अर्पित करते हैं, वे आप बलि-प्रिया की कृपा से कामादि शत्रुओं पर विजय प्राप्त करते हैं।

***

(६७८) श्रीभाषा-रूपा

वाणी-रूपा। अथवा जिसका निरूपण भाषा से हो, वह। इससे आख्या परमा सत्ता का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको विविध प्रकार की अगणित भाषा के रूप में ध्याते हैं और अपनी भाषा में आपकी भाव-मय स्तुति नित्य करते हैं, उन पर आप प्रसन्न होती हो तथा ऐसे भक्त संसार में वागीश हो वैभवशाली हो जाते हैं।

***

(६७९) श्रीवृहत्सेना

बड़ी सेना अर्थात् चतुरङ्गिणी सेनावाली। इससे श्री महा-राज्ञी का बोध नहीं वरन् अपरा सत्ताओं का बोध होता है, जो विश्व की शृङ्खलता की रक्षा करती हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

जो बड़े-बड़े पर्वतों के समान नाना आकार-प्रकारवाले हाथियों की भाँति भयवती प्रतीत होती हैं, जो ऊँची-ऊँची समुद्री तरङ्गों के समान घोड़ों से सहज ही पार होने योग्य नहीं दिखतीं एवं जो बड़े-बड़े यान, विमान, रथादि से बहुत मनोहर-सी दिखती हैं, उन माता श्रीललिताम्बा की वृहत् सेना हमारे सभी प्रकार के कष्टों, आपदाओं को दूर करनेवाली होवे।

***

(६८०) श्रीभावाभाव-विवर्जिता

भाव और अभाव दोनों से रहिता। यह अनाख्या सत्ता की द्योतक है। किसी के मत से भगवती सगुणा है, तो किसी के मत से निर्गुणा, परन्तु यथार्थतः यह न सगुणा है और न निर्गुणा। तब है क्या? इसका समाधान नहीं है। यह युक्ति के बाहर है। यह विज्ञान और दर्शन के परे है। केवल अनुभव-सिद्ध है। इसी कारण शिव-वाक्य है–

अद्वैतं केचिदिच्छन्ति, द्वैतमिच्छन्ति चापरे। मम तत्त्वं न जानन्ति, द्वैताद्वैत-विवर्जितम्।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भव अर्थात् संसार के सभी प्रकार के भयों से मुक्त होने के लिए, सूर्य-प्रभा जैसी प्रकाश करती हुई, भाव व अभाव से रहित माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और जीवन्मुक्त हो जाओ।

***

(६८१) श्रीसुखाराध्या

सुख-पूर्वक आराधन-योग्या। सुख से तात्पर्य है काय-क्लेश और मानसिक क्लेश का अभाव। उपवासादि काय-क्लेश हैं। काम, क्रोध, भय इत्यादि मन-क्लेश हैं। इसी से उक्ति है–

'श्री सुन्दरी-पूजन-तत्पराणां, भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि तुम्हारे भाव शुभ, शान्त और कल्याण-मय हैं व तुम्हारे हृदय में निर्मल भक्ति है, तो सुख से आराधना करने योग्य सर्वादि-रूपा माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और सभी प्रकार के भयों से मुक्त हो जाओ।

***

(६८२) श्रीशुभकरी

शुभ अर्थात् कल्याण करनेवाली। तात्पर्य है कि यह कभी किसी का अनिष्ट नहीं करती।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिसका नाम शुभ करनेवाला है, जिससे सभी प्रकार के भय दूर होते हैं, उन शुभकरी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और जीवन में शुभ-ही-शुभ को प्राप्त करो।

***

(६८३) श्रीशोभना

सुन्दरी। अथवा विश्व-शोभा-स्वरूपा। यह महा-त्रिपुर-सुन्दरी पद का द्योतक है।

इस नाम को आगे आनेवाले नाम 'सुलभा गतिः' से युक्त कर देने से अनेक अर्थों का बोध होता है। संयुक्त नाम का एक रूप ऐसा है–'शोभन+असुलभा गतिः–असुलभा गतिर्दुर्लभ-जन्म-मानुषादि तत् शोभनं यथा' अर्थात् मनुष्य जीवन को शोभन अर्थात् सार्थक करनेवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि तुम शोभना सद्-गति प्राप्त करना चाहते हो और अविनाशी ज्ञान प्राप्त करना चाहते हो, तो शीघ्र-से-शीघ्र ब्रह्म-विद्या माता श्रीललिताम्बा का आश्रय लो व उनकी आराधना करो।

***

(६८४) श्रीसुलभा-गति

सुख से प्राप्ति है जिसकी। 'सुख' से तात्पर्य है सुखोपास्यत्व का और 'गति' से प्राप्तव्य स्थान या फल का बोध होता है। शास्त्र का भी यही सिद्धान्त है कि यही सबसे सुलभ गति है–

'एषैव सर्व-भूतानां गतीनामुत्तमा गतिः।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! अशुद्ध भावों का परित्याग करो, शुद्ध भावों को ग्रहण करो तथा माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो, तभी तुम्हें सुलभा सद्-गति की प्राप्ति होगी, ज्ञान तुम्हें सुलभ होगा व मोक्ष भी तुम्हें सहज ही प्राप्त होगा।

***

(६८५) श्रीराज-राजेश्वरी

राजाओं के राजा की स्वामिनी। देव-राज के राजाओं अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र की स्वामिनी। अथवा 'राज-राज' कुबेर की संज्ञा है। इस अर्थ में कुबेर की स्वामिनी। अथवा भुवनेश्वरी महा-विद्या।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप राजा देवराज इन्द्र तथा उनके भी राजा ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि की ईश्वरी हो। जो भक्त रात्रि में आपको बहु-विध राजस उपचारों से पूजकर, आपके हजार नाम-मन्त्रों के द्वारा दीप-दान करता है, वह सम्पत्ति आदि से समृद्ध होकर तेजवान् होता है।

***

(६८६) श्रीराज्य-दायिनी

राज्य देनेवाली। 'राज्य' से स्वर्ग, वैकुण्ठ, कैलाश आदि के आधिपत्य का बोध होता है। भगवती चाहे जिसको भी इन्द्रत्व अर्थात् देव-राजत्व ही क्या, ब्रह्मा आदि का पद भी देती हैं।

'देवी-सूक्त' में भी कहा है–'यं यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम्।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप लोक-त्रय भूः, भुवः, स्वः–तीनों लोकों के राज को देती हो। आप जिस पर प्रसन्न हो जाती हो, उसकी सर्वत्र प्रशंसा होती है।

***

(६८७) श्रीराज्य-वल्लभा

(पूर्वोक्त) राज्य या आधिपत्य प्रिय हैं जिसके। अथवा 'राज्य' से राज्य के अधिपति राजाओं का भी बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपको जो राज्यों की वल्लभा अर्थात् राज्य जिसे प्रिय रुचिकर हैं, ऐसा मानकर ध्याते हैं और आपके मन्त्र के जप के साथ-साथ खिले हुए पुष्पों से पूजते हैं, वे रूपवान् हो जाते हैं तथा उन्हें राज-भोग-जनित सुखादि प्राप्त होते हैं।

***

(६८८) श्रीराजत्-कृपा

जिसकी 'कृपा' शोभायमान है अर्थात् जिसकी कृपा सर्व-विदित है। अथवा अपने स्वाभाविक कृपा-भाव से शोभमाना है–'राजति शोभमाना निज-स्वाभाविक कृपा-भावात् सा।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपकी कृपा जहाँ है, वहीं राज्य है। जहाँ राज्य है, वहाँ आपकी कृपा है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जो भक्त आपका चिन्तन करते हैं, वे तत्त्व-ज्ञानी हो जाते हैं।

***

(६८९) श्रीराज-पीठ-निवेशित-निजाश्रिता

देवराज आदि राजाओं को अपने 'पीठ' अर्थात् नगर में रखकर आश्रय देनेवाली। इससे यह बोध होता है कि सभी सत्तावाले इसी परमा सत्ता के आश्रित हैं। यहाँ तक कि देवों के अधिदेव महा-देव भी इसी परमा सत्ता के आश्रित होने से इसका सर्वोच्च पद है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! विश्व के एक-मात्र आधार, महान् उदार चित्तवाले त्रिपुरासुर का वध करनेवाले महादेव के राज्य पीठों पर, इन्द्रादि देवराजों के सिंहासनों पर अपने आश्रितों को बैठानेवाली महारानी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और स्वयं भी ऊँचे-से-ऊँचा आधार प्राप्त करो।

***

(६९०) श्रीराज्य-लक्ष्मी

राज्याभिमानिनी लक्ष्मी-शक्ति। इसका मन्त्र 'तन्त्र-राज' आदि ग्रन्थों में प्रसिद्ध है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त निशा में स्व-गुरुदेव के श्री-चरणों का शिर पर ध्यान कर, बिल्व-पत्रों पर लाल चन्दन से आपके हजार नामों को लिखते हुए आपको पूजता है, उसको राज्य-लक्ष्मी स्वयं वरण कर लेती हैं।

***

(६९१) श्रीकोश-नाथा

'कोश' अर्थात् भाण्डार की स्वामिनी। 'कोश' से धन-कोश, अन्न-कोश आदि का बोध होता है। अथवा कोश से जीव के १. अन्नमय, २. प्राणमय, ३. मनो-मय, ४. विज्ञान-मय, ५. आनन्दमय– इन पाँच कोशों का बोध होता है। इस भाव से 'कोश' से आवरण का तात्पर्य है। इनकी 'नाथा' अर्थात् स्वामिनी से परमात्मा का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! १. अन्न-मय, २. प्राण-मय, ३. आनन्द-मय, ४. विज्ञान-मय और ५. मनो-मय–ये पाँच कोश मानव शरीर में हैं और इनकी रक्षा आप करती हो। आपके द्वारा रक्षित ये पाँच कोश मानव शरीर के दिव्य भण्डार हैं, इनका पोषण एवं इनका विकास आपकी कृपा से ही होता है।

***

(६९२) श्रीचतुरङ्ग-बलेश्वरी

चतुरङ्गिणी सेना की स्वामिनी। 'अङ्ग-बल' का लक्ष्यार्थ व्यूह है। इस भाव से चतुर्व्यूहात्मा का बोध होता है। 'वह्वृचोपनिषत्' के मत से इन चारों व्यूहों के अभिमानी ये हैं–१. शरीर-पुरुष, २. छन्द पुरुष, ३. वेद-पुरुष और ४. महा-पुरुष।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त १. हाथी, २. घोड़े, ३. रथ, ४. पैदल–इन चार प्रकार के बलों की ईश्वरी के रूप में आपको ध्याते हैं, भजते है, वे अपने वैरियों के समूह को उसी प्रकार से जीत लेते हैं, जैसे हरिणों को सिंह जीत लेते हैं।

***

(६९३) श्रीसाम्राज्य-दायिनी

साम्राज्य को देनेवाली। इससे राजसूय यज्ञादि-स्वरूपा का बोध होता है, जिनके करने से मण्डलेश्वर, राजाधिराज या सम्राट् का पद मिलता है। इससे भगवती के कर्म-फल-दात्रीत्व का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप जिन भक्तों के हृदय-कमल में नित्य निवास करती हो, वे भोजन व वित्त के लिए आपके अतिरिक्त किन्हीं अन्य देवों की शरण में नहीं जाते। आपके द्वारा उनकी सभी प्रकार की पूर्ति हो जाती है।

***

(६९४) श्रीसत्य-सन्धा

सत्य पर अधिष्ठिता। इससे सद्-ब्रह्म का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सती, सत्-रूपिणी, सच्ची प्रतिज्ञावाली माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो और संशय-रहित होकर भोग व मोक्ष को प्राप्त करो।

***

(६९५) श्रीसागर-मेखला

समुद्र ही काञ्ची है जिसकी अर्थात् समुद्र से घिरी। इससे पृथ्वी-तत्त्व का बोध होता है, जो जल-तत्त्व से वेष्टित है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप समुद्र की करधनी पहने हुए भूमि-स्वरूपा हो। आपके द्वारा ही सृष्टि का नाना प्रकार से विस्तार होता है।

***

(६९६) श्रीदीक्षिता

जिसकी दीक्षा कर दी गई है–'दीक्ष+क्त+टाप्'।' अथवा दीक्षा देनेवाली 'दीक्षितृ–दीक्ष्+तृच।' पर व्युत्पत्ति ही युक्ततम है, कारण भगवती प्रकाश-शक्ति स्वयं गुरु-रूपा अर्थात् विमर्श-शक्ति-रूपा हैं। लिङ्ग-भेद से पदार्थ-भेद की आपत्ति नहीं है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! बुद्धि से देखे जाने योग्य, लोगों को ज्ञान देने व संसार-रूपी सागर से पार उतारनेवाली माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और पाप-जाल को भस्म कर जीवन्मुक्त हो जाओ।

***

(६९७) श्रीदैत्य-शमनी

भण्डासुर आदि दैत्यों का नाश करनेवाली। इससे आसुरी सर्गों का दमन करनेवाली '**शुद्ध विद्या**' का तात्पर्य है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! दुर्वृत्ती, दुराचारी दैत्यों का शमन करनेवाली, कमनीय मनोहर कान्तिवाली, दमन-नीति में प्रवीण माता श्रीललिताम्बा को अपने हृदय में ध्याओ और प्रबल प्रताप को पाओ।

***

(६९८) श्रीसर्व-लोक-वशङ्करी

सारे विश्व को अपने वश में रखनेवाली। इससे तुरीय विद्या और महा-माया दोनों का बोध होता है। तीनों लोकों अर्थात् ज्ञातृ-ज्ञान-ज्ञेय त्रि-भावों को वश में करनेवाली तुरीया-विद्या-भाव है और विश्व को शृङ्खला-बद्ध करनेवाली महा-माया है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त सन्ध्या समय आपके लाल-लाल तेज से व्याप्त हुई भूमि को लाल-लाल ध्याता है, वह सर्व-लोक-वशङ्करी सिद्धि को प्राप्त होता है।

***

(६९९) श्रीसर्वार्थ-दात्री

सब अर्थों को देनेवाली। सर्वार्थ से पुरुषार्थ-चतुष्टय–१. अर्थ, २. धर्म, ३. काम और ४. मोक्ष का तात्पर्य है। अथवा सबका अर्थ अर्थात् ज्ञान देनेवाली। 'सर्वस्य अर्थस्य दात्री।' सबसे ब्रह्म का भी तात्पर्य है–'सर्वं खल्विदं ब्रह्म।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! किसी से याचना न करो, न किसी का आश्रय ग्रहण करो। सब प्रकार के पदार्थों को देनेवाली माता श्रीललिताम्बा को हृदय में विराजमान करो और शाश्वत सुख को प्राप्त करो।

***

(७००) श्रीसावित्री

सविता का प्रकाश करनेवाली। सवितृ-पद से जगत्-प्रसूता का बोध होता है। जगत्-प्रसूता 'ॐ-कार' है। ॐकार ही विश्व का मूल कारण है। इससे 'सावित्री' जिससे गायत्री अर्थात् विश्व हुआ–'गायत्री वा इदं सर्वम्।'

सावित्री वेद-माता है–'सावित्री वेद-माता च' (महा-भारत, भीष्म-पर्व, दुर्गा-स्तोत्र)। जो 'सावित्री' है, वही गायत्री है, ऐसा 'श्रुति' कहती है–'तस्माद् गायत्री नाम स यामे वामूं सावित्री मन्वाह।' (वृ० ५/२४) 'सावित्री' का स्रवण या तेज से उत्पत्ति है, जिस हेतु सावित्री कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! हे प्रजा को उत्पन्न करनेवाली सावित्री! हे खिले हुए कमल पर विराजमान देवताओं द्वारा पूजित देवि! आप हमारे चित्त-रूपी प्राङ्गण में आइए-पधारिए।

***

(७०१) श्रीसच्चिदानन्द-रूपिणी

सत्, चित् और आनन्द रूपवाली। इससे ब्रह्म का बोध होता है क्योंकि ब्रह्म के प्रधान तीन लक्षण–१. सत्त्व, २. चित्त्व, ३. आनन्द हैं। सत्त्व से नित्यत्व, चित्त्व से चैतन्य और आनन्द से अविद्या-रहितत्त्व का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे ऐं वाग्-वीज सत्, हे ह्रीं माया-वीज़ चित्त, हे क्लीं काम-वीज आनन्द-रूपिणी माता श्रीललिताम्बा! आप सभी श्रेयों को प्रदान करनेवाली हो। आपकी कृपा से हमारे वैभव, आनन्द की निरन्तर वृद्धि हो।

***

(७०२) श्रीदेश-कालापरिच्छिन्ना

देश और काल अर्थात् दिक्-शक्ति और काल-शक्ति से अपरिच्छिन्न अर्थात् अनावृत्ता। इससे अनन्ता परमा सत्ता का बोध होता है। सर्व-प्रथम आवरण यही है, जो अनिर्वाच्य ब्रह्म को वाच्य ब्रह्म करता है या अमिता को बोध-गम्य करता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको देश और काल के मानादि से रहित परमार्थ ब्रह्म-शक्ति के रूप में ध्याते हैं, वे अमेय व उज्ज्वल कीर्ति को प्राप्त करते हैं।

***

(७०३) श्रीसर्वगा

सबमें रहनेवाली या सब जाननेवाली–'गम् ज्ञाने च'। सबमें है, इस भाव का 'गीता' इन शब्दों में समर्थन करती है–'**यो मां पश्यति सर्वत्र, सर्वं च मयि पश्यति।**' इसमें '**सर्व**' से भगवती के अभिन्नत्व का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! वृक्ष, पत्थर, पर्वतादि जड़ों में और मनुष्य, पशु-पक्षी तथा राक्षसादि चरों में सर्वत्र ही सब में आपका ही तेज व्याप्त है। जैसे महत्त ब्रह्म तत्त्व सब जगह व्याप्त है, वैसे आप सर्वगा हो।

***

(७०४) श्रीसर्व-मोहिनी

सभी को मोहनेवाली। '**मोहिनी**' से मोह में अर्थात् अविद्या में देनेवाली का तात्पर्य है, जिससे प्रपञ्च की स्थिति है। अथवा '**मोहिनी**' से आकृष्ट करनेवाली का भी बोध होता है। तात्पर्य कि भगवती अपने अतुल सौन्दर्य और आनन्द-मय स्वरूप के कारण ज्ञानियों को अपनी ओर सब प्रकार से आकृष्ट कर लेती हैं–'**सर्व इति सर्व-प्रकारेण वा सर्वतः मोहयति आकर्षति या।**' अथवा '**त्रैलोक्य-मोहन-चक्र**' की अधिष्ठात्री शक्ति-रूपा।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको पाश, अंकुश धारण करनेवाली, सम्पूर्ण विश्व को मोहित करनेवाली जानकर, हृदय में मन को एकाग्र कर, तुरीय सन्ध्या में स्मरण करते हैं, वे सभी अर्थों को पूर्ण करनेवाली कान्ति को पाते हैं।

***

(७०५) श्रीसरस्वती

ज्ञानाभिमानी शक्ति। ज्ञान से यथार्थ **विशेष** ज्ञान का ही बोध होता है, न कि अयथार्थ विशेष ज्ञान का। '**भरद्वाज स्मृति**' में इसकी परिभाषा है-

या वसेत् प्राणि-जिह्वासु, सदा वागुप-वर्तनात्।
सरस्वतीति नाम्नेयं, समाख्याता महर्षिभिः।।

अर्थात् जो प्राणियों की जिह्वाओं पर '**वाक्-शक्ति**' के रूप में रहती है; उसको महर्षियों ने '**सरस्वती**'-संज्ञा दी है। '**ज्ञान-वासिष्ठ**' की परिभाषा है-'**सरणात् सर्व-दृष्टीनां, कथितैषा सरस्वती**'। इससे '**ज्ञान-धारा**' का तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त बाँएँ हाथ में पुस्तक व अभय एवं दाहिने हाथ में अक्ष-माला और वर धारण करते हुए तथा दूध के समान श्वेत उज्ज्वल कान्ति की वर्षा करती हुई वागीश्वरी समझकर आपको ध्याते हैं, उनके हृदय में भगवती सरस्वती सदा निवास करती हैं।

***

(७०६) श्रीशास्त्र-मयी

शास्त्र-प्रधाना। '**शास्त्र**' से **सच्छास्त्र** का ही बोध होता है। अथवा **शास्त्र-स्वरूपा** अर्थात् **ज्ञान-स्वरूपा**। अथवा '**शास्त्र**' योनि है, ऐसा बोध होता है जिसका स्पष्टीकरण '**ब्रह्म-सूत्र**'- '**शास्त्र-योनित्वात्**' करता है। '**शास्त्र**' से उपनिषदों का भी बोध होता है। '**तं त्वौपनिषदं पुरुषं पृच्छामि।**' (श्रुति)

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सभी शास्त्रों की सार-रूपा पवित्रा माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो, जिनके अवयवों से सभी शास्त्र प्रकट हुए हैं।

***

(७०७) श्रीगुहाम्बा

गुफा में रहनेवाली माता। इससे '**छाया**'-रूपा का बोध होता है (इसकी व्याख्या पूर्व हो चुकी है)। अथवा '**गुह**'-'**स्कन्द-कुमार**' का नाम है, उनकी माता।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त अग्नि को प्रकट करने की अरणि-रूपिणी गुहाम्बा माता श्रीललिताम्बा को अपने हृदय में ध्याते हैं, पूजते हैं, भजते हैं, वे गुणों के गुहा-रूप अर्थात् भण्डार हो जाते हैं।

***

(७०८) श्रीगुह्य-रूपिणी

परम-रहस्य-स्वरूपा। परम-रहस्य से व्यावहारिक दृष्टि के अयोग्य ज्ञान का बोध होता है। इसी से 'सूत-संहिता' कहती है–

गुह्य-मूर्ति-धरां गुह्यां, गुह्य-विज्ञान-रूपिणीम्।
गुह्य - भक्त - जन - प्रीतां, गुहायां निहितां नुमः।

इससे अव्यक्ता प्रकृति का बोध होता है। अथवा गुह्योपनिषत्-स्वरूपा का भी बोध होता है–

'सर्वोपनिषदां देवि!, गुह्योपनिषदुच्यसे।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! गुह्य अर्थात् रहस्य-ज्ञान-रूपा माता श्रीललिताम्बा को गुह्य उपचारों से गुह्य स्थानों में ध्याओ, भजो और स्वयं गुह्यक अर्थात् विशेष सिद्धिवाले श्रीमान् बन जाओ।

***

(७०९) श्रीसर्वोपाधि-विनिर्मुक्ता

सब उपाधियों से विशेष रूप से (अथवा विकल्प रूप से अर्थात् विकल्पना के अनुसार) रहिता। इससे धर्म-सम्बन्ध-शून्या का बोध होता है। 'उपाधि' विजातीय पदार्थ-वाचक है, जिससे ब्रह्म के निर्द्वन्द्वत्व या अखण्डत्व के सिद्धान्त में बाधा आती है। इससे तर्क-सिद्ध 'उपाधि'-शून्या तादृश्यसद्-हेतु-गम्या का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सभी उपाधियों से मुक्त माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और मन तथा बाह्य शरीर की ज्वरादि सभी पीड़ाओं से मुक्त हो जाओ।

***

(७१०) श्रीसदा-शिव-पति-व्रता

शिव का पाति-व्रत अर्थात् शिव ही पति हो, ऐसा नियम 'सदा' अर्थात् सर्वदा जिसका है। अथवा 'सदा-शिव' ही जिसका पति है, ऐसा 'व्रत' अर्थात् नियमवाली। इससे सर्व-कालिक शिव-शक्ति-अभेद सिद्ध होता है। 'श्रुति' भी यही कहती है–'शक्ति-शक्तिमतोरभेदः।'

अथवा शिव और शक्ति के अविना-भाव नित्य संयोग-सम्बन्ध का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! यदि तुम सुखी, स्वस्थ, निरोग रहना चाहते हो, तो सदा-शिव की पति-व्रता अर्थात् पति-व्रत का पालन करनेवाली माता श्रीललिताम्बा की नित्य पूजा कर उन्हें ध्याओ-भजो।

***

(७११) श्रीसम्प्रदायेश्वरी

सम्प्रदायों की स्वामिनी। 'सम्प्रदाय' की परिभाषा है–'सम्यक् शिष्येभ्यः प्रदीयत इति सम्प्रदायः।' अर्थात् शिष्यों को सम्यक् प्रकार से अर्थात् नियमानुसार दीक्षा और शिक्षा दी जाती है। अथवा 'सम्प्रदाय'-संज्ञक मन्त्रार्थ भी है, जिसका उल्लेख 'योगिनी-हृदय' और 'दत्तात्रेय-संहिता' में प्रसिद्ध है, इसकी ईश्वरी। 'साम्प्रदायिक' एक विशिष्ट सम्प्रदाय के अनुयायी को कहते हैं, जो ब्रह्म को शक्य प्रपञ्च-प्रति-योगित्व से 'शक्ति' ही कहते हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे वैष्णवों, शैवों, सौरों, गाणपत्यों! तुम लोग ऊँचे-नीचे, छोटे-बड़े भावों से तथा मुद्रा-चिह्नों व तिलकादि से झगड़े कर आपस में क्लेश न करो। यदि भक्ति है, तो सभी सम्प्रदायों की ईश्वरी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो, जिससे धर्म व ज्ञान तथा शाश्वत सुख देनेवाली श्रियों की प्राप्ति हो।

***

(७१२) श्रीसाध्वी

अच्छी या पतिव्रता स्त्री। 'साधु' शब्द का स्त्री-लिङ्ग में प्रयोग है। 'साधु' का वाच्यार्थ उचित या युक्त है। इससे इस लक्ष्यार्थ का बोध होता है कि 'धर्मी' और 'धर्म-शक्ति' द्वय का अभेद युक्त है।

◆◆स्तुति◆◆

हे साध्वी माता श्रीललिताम्बा! आपका दर्शन, तत्त्व-बोध साधु है, श्रेष्ठ है। इसे पा लेने के बाद कोई प्राप्तव्य पाने योग्य शेष नहीं रहता और इसे पाकर भक्त ब्रह्म नामक रस को आस्वादित करते हैं, अनुभव करते हैं।

***

(७१३) श्रीगुरु-मण्डल-रूपिणी

परम शिव से लेकर अपने-अपने गुरु, परम गुरु और परापर-गुरु पर्यन्त जो गुरु-मण्डल अर्थात् गुरु-परम्परा है, यही रूप अर्थात् निरूपण है जिसका। इससे चक्र-रूपा विमर्श-शक्ति का बोध होता है। अथवा अविच्छिन्न रूप से गुरु-परम्परा-क्रम से रहस्य-ज्ञान-स्वरूपा है, न कि पुस्तक-ज्ञान-गम्य-स्वरूपा।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! स्व-गुरु से लेकर परम-शिवादि-पर्यन्त सभी गुरुओं का मण्डल आप में समाविष्ट है। जो भक्त आपको ध्याते हैं, भजते हैं, उन्हें पग-पग पर गुरु-मण्डल की कृपा की अनुभूति होती रहती है।

***

(७१४) श्रीकुलोत्तीर्णा

कुल से अतिक्रान्ता। 'कुल' नाम इन्द्रियों का है। इन सबसे 'अतिक्रान्ता' अर्थात् अगम्या। इन्द्रिय ग्यारह हैं–५ ज्ञानेन्द्रिय, ५ कर्मेन्द्रिय और ११वाँ मन। इन सभी से जो नहीं जानी जा सकती। इसी से इन्हें अचिन्त्या और 'अप्राप्या मनसा' कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! तन्त्रों में शरीर की सभी इन्द्रियों को कुल कहा गया है। आप इन सबको पार कर सहस्त्रार-कमल में विलास करती हो, इसलिए आप कुलोत्तीर्णा कहलाती हो। आपको जो भक्त कुलोत्तीर्णा-रूप में ध्याते हैं, भजते हैं, उनके कुल अर्थात् इन्द्रियों का विकास हो जाता है।

***

(७१५) श्रीभगाराध्या

'भग' से 'सवितृ-मण्डल' का तात्पर्य है। इसमें जिसकी उपासना होती है। इससे सवित्र-मण्डल की रहस्य उपास्ति के अधिकरणत्व का बोध होता है। अथवा 'भग' या योनि से मातृ-योनि का तात्पर्य है। मातृ-योनि–'मूलाधार' की कर्णिका पर है, जहाँ कुण्डलनी की उपासना होती है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कुछ लोग आपको भग अर्थात् सूर्य-मण्डल में चमकते हुए तेज रूप से भजते हैं। कुछ लोग भग अर्थात् छहों ऐश्वर्य के रूप में आपका ध्यान एवं गुण-गान करते हैं। कुछ लोग भग अर्थात् मूल बिल में कुल-कुण्ड में कुण्डलिनी भुजङ्गी के रूप में आपकी स्तुति करते हैं। सूर्य, ऐश्वर्य तथा कुण्डलिनी–तीनों भग-रूपों में आप महा-भैरवी हो। आप हमारा कल्याण करो।

***

(७१६) श्रीमाया

माया-वाद की 'माया' एक है, तो शक्ति-वाद की 'माया' दूसरी। 'माया' की व्याख्या अति कठिन है। पूज्य-पाद शङ्कराचार्य जी ने भी प्रायः असमर्थता दिखाई है। उनके मत से 'माया' न सत् है और न असत्। क्या है, कही नहीं जा सकती। उन्होंने 'बौद्ध माया-वाद' का खण्डन मात्र किया है। यह 'वेदान्त शक्ति-वाद' ही है, जो 'माया' की युक्त व्याख्या कर ब्रह्म की पूर्णता में आपत्ति नहीं आने देता। 'माया' को अव्यक्ता की व्यक्तावस्था कह सकते हैं। यह व्यक्तावस्था उसी सत्, चित्त् और आनन्द-मयी की है, जिससे उसकी पूर्णता होती है। इसी से उसकी अद्वैतता सिद्ध होती है।

◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जिसमें सम्पूर्ण विश्व समा जाता है, जो सभी लोकों की माप करनेवाली है, उन पर-शिव की जाया माता श्रीललिताम्बा को अमावास्या की रात्रि में सविधान ध्याओ-भजो और माया में डूबने की अपेक्षा उससे पार हो जाओ।

***

(७१७) श्रीमधुमती

मधुवाली। इससे 'मधु'-विद्या का बोध होता है। सगुण ब्रह्म-विद्या की संज्ञा 'मधु'-विद्या है। अथवा 'मधुमती' नाम की एक विशेष विद्या है। अथवा योग-शास्त्रोक्त 'सप्त-भूमिकाओं' की चरमा भूमिका 'मधुमती' है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! कुछ भक्त आपको तुरीया योग-भूमिका मधुमती के रूप में, कुछ भक्त आपको दिव्य नदी मधुमती के रूप में, कुछ भक्त आपको देवता विशेष मधुमती के रूप में, कुछ भक्त आपको मुधमती-विद्या-मन्त्र-रूप में, तो कुछ भक्त आपको मुख में हासवती व हाथ में सुरा-पूर्ण पात्रवती एवं मस्तक में चन्द्र-कलावती तथा कण्ठ में हारवती पर-शिवा कामेश्वरी के रूप में ध्याते हैं, भजते हैं।

***

(७१८) श्रीमही

पृथ्वी। इस भाव में लोक-धात्री का बोध होता है। अथवा इससे प्रकृति का बोध होता है, जो बड़ी होकर सर्व-व्यापक है–'महद्-व्याप्य स्थिता सर्वं, महीति प्रकृतिर्मता।'(देवी-पुराण)

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप हम सबके किए-कराए कार्यों को सहती हो और हमें पुत्रों के समान धारण-पोषण करती हो। हमारे लिए जल, औषधि, सोना, चाँदी, मणि, रत्न आदि देती हो तथा पर्वत, नदी, समुद्र आदि को धारण करती हो। जो भक्त आपको इस प्रकार रात-दिन ध्याते हैं, उन्हें आप धन, वैभव, ऐश्वर्य से पूर्ण कर देती हो।

***

(७१९) श्रीगणाम्बा

'गणानां' या 'गणस्य अम्बा' गण की माता। गण ये जीव-मात्र और गजानन-दोनों का बोध होता है। गजानन-'गण' के स्वामी हैं परन्तु फिर भी एक मत के अनुसार पराम्बा के एक 'गण' ही हैं। 'गण' नाम समूह का है, जिससे विश्व का भी बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको गण-मुख्य गणेश की अम्बा के रूप में, योग-शक्ति-पीठ पर रात्रि में पूजते-भजते हैं, उनके गणपति मन्त्र स्वतः शीघ्र सिद्ध हो जाते हैं।

***

(७२०) श्रीगुह्यकाराध्या

'गुह्यक' एक देव-विशेष गण हैं, इनकी उपास्या। अथवा 'गुह्यक' से अज्ञात रहस्य-स्थल का बोध होता है, वहाँ जिसकी आराधना होती है, वह।.

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको गुह्यकों अर्थात् देव विशेष से आराधिता मानकर ध्याते हैं, पूजते हैं, उनको साध्यों की सिद्धि सहज ही प्राप्त हो जाती है।

***

(७२१) श्रीकोमलाङ्गी

कोमल अथवा सुकुमार अङ्गोंवाली।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! दूध के फेन के समान कोमल अङ्गोंवाली, सुधांशु चन्द्र के समान मुखवाली माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और स्वयं भी कोमल हृदयवाले, उज्ज्वल मनवाले बन जाओ।

***

(७२२) श्रीगुरु-प्रिया

गुरु की प्रिया अर्थात् स्त्री। इस भाव में गुरु-पत्नी से अभिन्न-रूपा का बोध होता है। 'गुरु' से जगद्‌गुरु पर-शिव का बोध होता है। अथवा गुरु जिसका प्रिय है–'गुरुः प्रियो यस्याः।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको विश्व के गुरु-देव महेश्वर पर-शिव कामेश्वर के वाम-भाग में विराजिता समझ कर परमामृत से तर्पण करते हैं, वे शीघ्र ही सिद्ध हो जाते हैं।

***

(७२३) श्रीस्वतन्त्रा

स्वाधीना। इससे सर्व-कर्तृत्व का बोध होता है, जो परमा सत्ता का ही गुण है। अथवा 'स्वतन्त्र तन्त्र' में प्रतिपादिता महा-विद्या।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप सृष्टि करने में और पालन व संहार करने में सर्व-प्रकार स्वतन्त्र हो। आपको किसी की कभी कोई अपेक्षा नहीं होती।

***

(७२४) श्रीसर्व-तन्त्रेशी

श्री-क्रम के प्रधान चौंसठ तन्त्रों द्वारा प्रतिपादिता भगवती।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! सिद्धि को देनेवाली, मन्त्रों की मातृका, तन्त्रों की ईश्वरी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और तन्त्रों के सभी आम्नायों के रहस्यों को जान लो।

***

(७२५) श्रीदक्षिणामूर्ति-रूपिणी

ब्रह्मा, विष्णु आदि के गुरु होने से शिव का एक रूप 'दक्षिणामूर्ति' नाम से प्रसिद्ध है। जगत् के गुरु यही हैं। अन्य जो भी कोई गुरु कहे जाते हैं, सब कल्पित प्रतिनिधि मात्र हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! दक्षिणा अर्थात् अनुकूल मूर्तिवाली, अथवा नारायण आदि के तत्त्व-विद्या के गुरु दक्षिणामूर्ति शिव की रूपिणी माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो और विपरीत-से-विपरीत शत्रु को भी अपने अनुकूल बना लो।

***

(७२६) श्रीसनकादि-समाराध्या

सनक, सनन्दन आदि द्वारा सम्यक् प्रकार से अर्थात् विधि-पुरस्सर उपासना जिसकी हुई है। इसी हेतु सनकादि की गणना गुरु-परम्परा में है (श्री-क्रम में)।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जिन भक्तों के पूर्व जन्मों के पुण्य उदित होते हैं, वे ही सनकादि सिद्धों से आराधिता आपके मन्त्र को जप पाते हैं।

***

(७२७) श्रीशिव-ज्ञान-प्रदायिनी

शिव का ज्ञान देनेवाली। 'शिव' से यहाँ अव्यक्ता प्रकृति या धर्मी-शक्ति या शक्ति-मान् या कूटस्थ ब्रह्म या अनुपहित चेतना का बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! जो शिव को अपना बोध देती हैं और शिव के बोध को भक्तों को दे देती हैं। अथवा जो संसार से पार होने के लिए शिव के ज्ञान को भक्तों को बतलाती हैं, उन शिव-ज्ञान-प्रदायिनी मूल-प्रकृति-रूपा माता श्रीललिताम्बा को ध्याओ-भजो।

***

(७२८) श्रीचित्-कला

चैतन्य-कला।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको अपने चित्त में चेतना-रूप में चिन्तन करते हुए, भाव-मय द्रव्यों अथवा पूजा के उपचारों से पूजते हैं, उन भक्तों को आठों सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

***

(७२९) श्रीआनन्द-कलिका

आनन्द-रूपी कली। इसके अन्तर्गर्भ-स्थित अर्थात् अव्यक्त सर्व-व्यापी आनन्द का बोध होता है। चेतना और आनन्द का नित्य संयोग-सम्बन्ध है अर्थात् जहाँ चेतना है, वहाँ आनन्द-भाव भी है।

◆◆प्रार्थना◆◆

देव-सभा में ब्रह्मादि जिसके परिचारक-सेवक होते हैं, तुरीय शिव-तत्त्व भी जिसको भार-धारण करनेवाला वाहन सवारी-सा ही रहता है, वह परे-से-परे ब्रह्म-नाम की आनन्द-कलिका माता श्रीललिताम्बा हमारे मन में विलास करती रहें।

***

(७३०) श्रीप्रेम-रूपा

प्रेम का अर्थ है स्नेह, भक्ति, वासना इत्यादि। इससे मेलन-भाव का बोध होता है। मेलन-भाव सजातीयता में ही है, न कि विजातीय या विषम भाव में। इससे विश्व की मौलिक सजातीयता सिद्ध होती है। प्रेम के चरम रूप को अनन्य भाव कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! संसार में प्रेम ही शुभ और अशुभ कर्मों में प्रवृत्ति को बढ़ानेवाला है। प्रेम ही भक्तों के मन को प्रेरणा देनेवाली भक्ति है और प्रेम-रूप भक्ति से ही आपकी सुन्दर मनोहर मूर्ति भक्तों के मन में प्रकट होती है। इस प्रकार आप अरूपा होते हुए भी प्रेम-रूपा हो।

***

(७३१) श्रीप्रियङ्करी

प्रिय अर्थात् मनोनुकूल कार्य करनेवाली। यहाँ मन से पर-मन का ही, जिससे मोक्ष अर्थात् दुःख से छुटकारा मिलता है, बोध होता है न कि अपर-मन का, जिससे बन्धन होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जगत् का कल्याण करनेवाली आप जगन्माता को कौन प्रणाम नहीं करता, सभी करते हैं। शत्रुओं को भयभीत करनेवाली आपको कौन नहीं भजता, सभी भजते हैं। विपदाओं का क्षय करनेवाली आपको कौन नहीं पूजता, सभी पूजते हैं। भजन करनेवाले भक्तों का प्रिय करनेवाली आपको कौन नहीं स्मरण करता, सभी करते हैं।

***

(७३२) श्रीनाम-पारायण-प्रीता

नाम-कीर्तन से सन्तुष्ट। 'नाम' से 'सहस्त्र-नाम', 'शत-नाम' आदि का बोध होता है। नाम-पारायण–श्रवण (सुनना) और श्रावण (सुनाना) दोनों है। पारायण मुख्यतया तीन प्रकार के हैं–१. मन्त्र-पारायण, २. नाम-पारायण और ३. पूजा-पारायण। 'शक्ति-सङ्गम' के मत से पारायण पाँच प्रकार के हैं–१. मन्त्र, २. नाम, ३. चक्र, ४. यन्त्र और ५. नाड़ी। इनके नियम और विधि तत्तत् देवताओं के नामानुसार और मन्त्रानुसार भिन्न-भिन्न हैं। उक्त तीनों पारायणों में नाम-पारायण अर्थात् नाम-कीर्तन सबसे सुलभ है। अतएव सर्व-साधारण के निमित्त यही प्रशस्त है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको रात्रि के मध्य भाग में पञ्च-मकारों से पूजते हैं और सहस्त्र-नाम से भाव-पूर्ण हो स्तुति करते हैं, उन्हें आप जो देती हो वह किसी के मन और वाणी का विषय नहीं हो सकता।

***

(७३३) श्रीनन्दि-विद्या

नन्दी अर्थात् नन्दिकेश्वर की उपासिता विद्या से मन्त्र या देवता के सूक्ष्म-रूप का तात्पर्य है। 'विद्या' स्त्री-मन्त्र को कहते हैं।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपकी नन्दि-विद्या अथवा नन्दिकेश्वर से आराधित आपके मन्त्र को जपता है और दुग्ध व शुद्ध जल से आपको स्नान अथवा अभिषेक कराता है, उसके घर में लक्ष्मी प्रति-दिन अधिकाधिक दिन दूनी-रात चौगुनी बढ़ती हैं व घर से बाहर नहीं जातीं।

***

(७३४) श्रीनटेश्वरी

नट अर्थात् चिदम्बर नट की स्वामिनी। नट लीला (तमाशा) करनेवाले को कहते हैं। लीला तो वैसे विश्व का एक अणु भी सर्वदा करता ही रहता है, परन्तु यथार्थतः लीलाकार या नट प्रत्येक पदार्थ-स्थित ईश्वर-मात्र है। ऐसा 'गीता' के इस प्रवचन से स्पष्ट है–

'ईश्वरः सर्व-भूतानां, हृद्देशेऽर्जुन! तिष्ठति। भ्रामयन् सर्व-भूतानि, यन्त्रारूढाणि मायया।'

गीतोक्त ईश्वर ही काल-शक्ति है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! नृत्य-कला के गुरु चिदम्बर नट जब आपके सम्मुख नृत्य करते हैं, तब उस नृत्य पर प्रसन्न होकर नट शिव को आप अपना प्रिय पद अर्पित करती हो।

***

(७३५) श्रीमिथ्या-जगदधिष्ठाना

असत्-रूप जगत् की अधिष्ठान-स्वरूपा अथवा मिथ्या-रूप जगत् ही जिसका अधिष्ठान है, वह। अधिष्ठान से भानाधिकरण का बोध होता है। इसकी व्याख्या में अनेक दार्शनिक उलझनें हैं। यदि हम जगत् को मिथ्या मानते हैं, तो सत्-रूपिणी भगवती का असत् या मिथ्या अधिष्ठान नहीं हो सकता। इसमें तार्किक आश्रय-सिद्ध दोष आ जाता है। 'मनोविज्ञान' का भी ऐसा सिद्धान्त है कि अधिष्ठान का, आकल्पित अर्थात् सत्य होने से, नाश नहीं है–

'अधिष्ठान स्म नासो न सत्यत्वादेव सर्वदा।'

इस प्रकार जगत् अधिष्ठान होता हुआ मिथ्या नहीं हो सकता। अतएव इसमें ऐसा बोध होता है कि अधिष्ठातृ-अधिष्ठान भाव ही मिथ्या है, कारण भगवती स्वयं जगद्-रूपिणी हैं। यह 'परिणाम-वाद-सिद्धान्त' है, जो 'विवर्त-वाद-सिद्धान्त' का खण्डन करता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप मिथ्याभूत जगत् प्रपञ्च की आश्रय हो। इस प्रकार आपको जो भक्त ध्याते हैं-भजते हैं, उनमें अनिवर्चनीया परा निष्ठा उत्पन्न हो जाती है।

***

(७३६) श्रीमुक्तिदा

मुक्ति देनेवाली। इससे 'मुक्ति' देनेवाली महा-विद्या का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! सिद्धि प्राप्त योगी, वेदान्त एवं सांख्य-शास्त्र के विद्वान् आपको मुक्ति देनेवाली के रूप में देखते हैं, भजते हैं।

***

(७३७) श्रीमुक्ति-रूपिणी

मुक्तावस्था-स्वरूपा। इससे 'आनन्द-ब्रह्म-रूपिणी' है, ऐसा बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! मुक्ति-रूपिणी माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो और प्राणियों को कौन मुक्त करता है, कौन किससे कैसे कितने काल तक के लिए, क्यों और कब छुड़ाता है अथवा स्वयं ही कैसे बन्धन से मुक्त हो जाता है, इस प्रकार के सभी जटिल गम्भीर रहस्यों को सहज रूप में जान लो।

***

(७३८) श्रीलास्य-प्रिया

नर्तन या नृत्य-प्रिया। 'लास्य' एक विशिष्ट प्रकार के नृत्य को कहते हैं। इसकी विशेषता यह है कि जहाँ सामान्य नृत्य में गीत और वाद्य की आवश्यकता है, वहाँ लास्य में गाना नहीं होता, केवल मूक-भाव का प्रदर्शन होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त निशा में आपकी पूजा कर आपको अनेक प्रकार से प्रसन्न करते हैं, वे आपके पास मणि-द्वीप में पहुँच जाते हैं।

***

(७३९) श्रीलय-कारी

लय को करनेवाली। 'लय' से चित्त की अवस्था-विशेष का बोध होता है और समष्टि-भाव में नाम और रूप-द्वय 'अविद्या-पाद' का तथा विद्या और आनन्द-पाद के परे 'तुरीय-पाद' का बोध होता है। अथवा तालों से नृत्य और गीत के सम (काल-परिच्छेद) का बोध होता है, जिसे सङ्गीत-शास्त्र में लय कहते हैं, उसे करनेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! छोटे-छोटे अपराध कर पछतानेवाले लोगों का उद्धार करनेवाले तो अनेक देव हैं, किन्तु प्रायश्चित्त के पथ से अत्यन्त दूर, दुरित पाप-समूह से भरे लोगों के चित्त को लय करने के लिए, एक आप ही विलास करती हो।

***

(७४०) श्रीलज्जा

लज्जा-रूपा। जीव में जो 'लज्जा' भाव है, वह यही है। इसी से 'या देवी सर्व-भूतेषु, लज्जा-रूपेण संस्थिता' (चण्डी) कहा गया है। यही लज्जा-भाव विवेक का एक रूप है, जो जीव को असत्-कर्म करने से रोकता है। अथवा 'लज्जा' से हृल्लेखा-वीज (ह्रीं) का भी बोध होता है।

◆◆प्रार्थना◆◆

जो पुरुषों की लज्जा-रूपिणी हैं, जो स्त्रियों में लज्जा-रूपिणी एवं विद्वानों व विशाल परिवार-समाज के लिए भी लज्जा-रूपिणी हैं, वे माता श्रीललिताम्बा हमारी दृष्टि में सदा विराजित रहें। हम उनकी कृपा से कभी भी लज्जा-हीन न होवें।

***

(७४१) श्रीरम्भादि-वन्दिता

रम्भा, उर्वशी आदि स्वर्गीय अप्सराओं से सेविता।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त रम्भा, उर्वशी, तिलोत्तमा, मेनकादि अप्सराओं से वन्दित हुई आपको ध्याते हैं-पूजते हैं, वे शीघ्र ही विपुल लक्ष्मी को प्राप्त करते हैं।

***

(७४२) श्रीभव-दाव-सुधा-वृष्टि

संसार-रूपी वन-वह्नि को बुझानेवाली अमृत-धारा। संसार की एक उपमा दावानल से भी दी जाती है। जिस प्रकार वन में आग लगने से वंन के रहनेवाले पशु-पक्षीगण वन से बाहर जाने का रास्ता नहीं पाते, उसी प्रकार दुःखों से भरे संसार से जीव को बड़ी कठिनाई से छुटकारा मिलता है। यह तभी सम्भव है, जब भगवती की कृपा हो। 'भगवती की कृपा' ही सुधा-वृष्टि है।

'भवदा+वसुधा+वृष्टि' इस प्रकार पद-विच्छेद करने से 'मोक्ष' और 'भोग' को देनेवाली अर्थ है। 'भवदा' का अर्थ है भव अर्थात् शिव (पद) या मोक्ष को देनेवाली और 'वसुधा' अर्थात् रत्न या धन को देनेवाली–'वसु रत्नं धनं च धत्ते एत्तादृशी वृष्टिः।'

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भव अर्थात् संसार के कष्टों को शमन करने हेतु अमृत की वर्षा करनेवाली माता श्रीललिताम्बा का आश्रय ग्रहण करो और भीषण-से-भीषण सांसारिक कष्टों से निर्भय हो जाओ।

***

(७४३) श्रीपापारण्य-दावानला

पाप-रूप वन की वनाग्नि-स्वरूपा। तात्पर्य कि पापों के वन अर्थात् समूह को जलानेवाली वनाग्नि-स्वरूपा है। अथवा पाप-स्वरूप वन की अग्नि अर्थात् उपास्ति आदि के प्राणों को लानेवाली। 'अनला' का ऐसा भी अर्थ है कि 'अन्' अर्थात् प्राण, 'ला' अर्थात् लाती है–'अनान् प्राणान् लाति आदत्ते।' इस प्रकार ऐसा बोध होता है कि उपासना आदि पाप-नाशक उपायों को दिलानेवाली।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप विश्व की ईश्वरी हो, हम आपकी प्रजा हैं। आप दिव्यौषधी हो, हम रोगी हैं। आप लोकोद्धारकारी हो, हम पतित हैं। आप पवित्र समुद्र हो, हम प्यास से आकुल हैं। आप पाप के वन के लिए दावानल हो, हम अगणित पापवान् हैं। आपको करुणा-परायण जानकर हम आपकी शरण में हैं। हमारे लिए जो समुचित हो, वह आप कीजिए।

***

(७४४) श्रीदौर्भाग्य-तूल-वातूला

दौर्भाग्य-रूपी कपास को बिखेरनेवाली (उड़ा देनेवाली)। 'तूल' या कपास से धुनी रुई का बोध होता है, जो हवा लगते ही बिखर जाती है। इससे ऐसा बोध होता है कि अभागे जीवों को भगवती भाग्यवान् बना देनेवाली हैं।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! भक्तों के दुर्भाग्य-रूप कपास के लिए माता श्रीललिताम्बा का पन्द्रह अक्षर का मन्त्र वायु का तूफान, बवण्डर है। इसे जपो और इसे जपते हुए शीघ्र ही अपने सौभाग्य-रूप चन्द्रमा की पूर्णिमा का अवलोकन करो।

***

(७४५) श्रीजरा-ध्वान्त-रवि-प्रभा

जरा-रूपी अन्धकार को नाश करनेवाली सूर्य की प्रभा या प्रकाश-शक्ति। इससे आत्मा को अजर-अमर करनेवाली 'विज्ञान-शक्ति' का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको वृद्धावस्था-रूपी अन्धकार को दूर करनेवाली सूर्य-प्रभा के रूप में ध्याते हैं-भजते हैं, वे शीघ्र ही सौन्दर्य-रूप रस की वर्षा करने लगते हैं।

***

(७४६) श्रीभाग्याब्धि-चन्द्रिका

भाग्य-लक्षण के समुद्र की चन्द्रिका है अर्थात् भाग्य-रूपी समुद्र को चमकानेवाली ज्योत्स्ना है।

◆◆प्रार्थना◆◆

हे मन! शिव के भाग्य-रूप समुद्र को बढ़ानेवाली चाँदनी-रूपा माता श्रीललिताम्बा की उपासना करो और स्वयं भी भाग्यशाली-से-भाग्यशाली बन जाओ।

***

(७४७) श्रीभक्त-चित्त-केकि-घनाघना

भक्त-मन-मयूर को उल्लसित करनेवाली प्रगाढ़ मेघ-स्वरूपा। इससे ऐसा बोध होता है कि भगवती अपने भक्तों के मन को उसी प्रकार आकृष्ट करती हैं, जिस प्रकार घने मेघ को देखकर मयूर आनन्द से नाचने लगता है। 'घनाघना' से निरन्तर घना का तात्पर्य है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप आनन्द-सुधा बरसाती हुई, भव अर्थात् संसार के ताप-कष्टों से तपे भक्तों को संजीवित करती हो।

***

(७४८) श्रीरोग-पर्वत-दम्भोलि

रोग-रूपी पर्वत के लिए वज्र-स्वरूपा (चूर्ण करनेवाली)। रोग से तात्पर्य है ताप का, जो तीन प्रकार का होता है और बड़ा कठोर होता है, जिस कारण पर्वत से उपमा दी गई है। स्थूलत्व भी उपमा का कारण है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आप रोग-रूप पर्वत के लिए वज्र हो। जो भक्त आपका आश्रय लेते हैं, वे नित्य ही आरोग्य-रूप अमृत पीकर जरा-रहित देवों के समान बन जाते हैं।

***

(७४९) श्रीमृत्यु-दारु-कुठारिका

मृत्यु-रूपी वृक्ष के लिए कुठार-स्वरूपा (काटनेवाली)। इससे अमरत्व प्रदान करनेवाली '**विज्ञान-शक्ति**' का बोध होता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! जो भक्त आपको मृत्यु-रूपी काठ के लिए कुल्हाड़ी समझ कर भजते हैं, उनके आश्रित भी यम के भय से मुक्त हो जाते हैं।

***

(७५०) श्रीमहेश्वरी

बड़ी स्वामिनी। बड़ी-से-बड़ी स्वामिनी अर्थात् परमा सत्ता का बोध होता है। इसकी व्याख्या २०८ वें नाम '**माहेश्वरी**' में देखें।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! पर-शिव कामेश्वर का मुख्य परिग्रह, पत्नी, परिवार आदि सब आप ही हो। इस कारण आप महेश्वरी नाम से विख्यात हो। जो भक्त इस रूप में आपको ध्याते हैं-भजते हैं, उनके सभी कार्य पूर्ण होते हैं।

***

(७५१) श्रीमहा-काली

श्रेष्ठा काली। काली के असंख्य रूप हैं, कारण काली से कलन-शक्ति अर्थात् सृजन और संहरण-शक्ति का बोध होता है। ये धर्म-शक्तियाँ हैं। 'महा-काली' से धर्मी-शक्ति का बोध होता है। यही धर्मी-शक्ति आद्या है, जैसा 'शक्ति-सङ्गम तन्त्र' कहता है–'आद्या कृष्णा महा-काली।'

अथवा 'मार्कण्डेय-पुराणोक्त सप्तशती'-प्रतिपादिता प्रथम चरित-नायिका 'महा-काली'। अथवा 'तन्त्र'-प्रतिपादिता एक विशिष्ट रूपा कालिका। अथवा उज्जैन-पीठ के अधिष्ठातृ देव 'महा-काल की शक्ति'।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! भूतों की उपसंहार-क्रीड़ा में चतुर और हजारों रोग जिसकी काँख में रहते हैं अथवा जिसकी ड्योढ़ी पर हजारों रोग आज्ञा की प्रतीक्षा करते रहते हैं, ऐसे उत्कृष्ट काल को भी आप प्रेरणा देती हो, खा लेती हो, मर्दन करती हो, इस कारण आप महा-काली हो। आपको मेरा पुनः-पुनः नमस्कार है।

***

(७५२) श्रीमहा-ग्रासा

महान् 'ग्रास' (कौर) वाली। महान् से अपरिमित का तात्पर्य है। 'श्रुति' भी कहती है-

'यस्य ब्रह्म च क्षत्रं चोभे भवत ओदनः।'

इससे भद्र-काली के एक ध्यान का भी बोध है, जो कहती है कि-"मैं भूखी हूँ। इस समस्त विश्व का एक ग्रास करती हूँ–

'क्षुच्छ्यामा कोटराक्षी मसिमसित-मुखी दीर्घ-केशी रुदन्ती,
नाहं तृप्ता वदन्ती जगदखिलमिदं ग्रास-मेकं करोमि।'

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! ब्रह्म और क्षत्र इन दोनों का आप ग्रास करती हो, इस कारण आप महा-ग्रासा कहलाती हो। आपके चरण-युगल को हम नित्य प्रणाम करते हैं।

***

(७५३) श्रीमहाऽशना

बड़ी खानेवाली। महा-ग्रासा का 'महाऽशना' होना स्वाभाविक है। विश्व में भगवती का अशन-व्यापार निरन्तर होता ही रहता है।

◆◆स्तुति◆◆

हे माता श्रीललिताम्बा! आपका अशन अर्थात् भोजन महान् है, आपको महा-परिमाण में पर्वत-राशि की तरह दी हुई बलि भी समुद्र की प्यास बुझाने के लिए एक पानी की अञ्जलि देने के समान है। आपको हमारा बारम्बार प्रणाम है।

***

(७५४) श्रीअपर्णा

इसके अनेक तात्पर्य हैं। '**पर्ण**' ऋण को भी कहते हैं। इस भाव में ऋण-रहिता अर्थ होता है- '**अपगतमृणं यस्याः साऽपर्णा**। 'नैरुक्तिक' अर्थ है पतन। इस भाव में पतन-रहिता का बोध होता है। फिर '**पर्ण**' नाम पत्ते का है। इस भाव में पत्ते को भी न खानेवाली। इससे पार्वती उमा को बोध होता है (कालिका-पुराण)–

'आहारं त्यक्त-पर्णाऽभूद्यस्माद्धिमवतः सुता। तेन देवैरपर्णेति कथिता पृथिवी-तले।'

अर्थात् पार्वती उमा जब तपस्या करने लगीं, तो अन्न आदि की क्या कथा, पत्ते तक नहीं खाती थीं। '**अपर्णा**' से निराहारा का तात्पर्य है।

‘कुम्भ’-पर्व के पावन अवसर पर
‘तीर्थ-राज प्रयाग’-रूपी तत्त्व-विज्ञान

जिसके द्वारा मनुष्य ‘तर’ जाते हैं, अर्थात् अपने परम लक्ष्य ‘आत्म-ज्ञान’-रूपी मोक्ष को प्राप्त करते हैं, उसे ‘तीर्थ’ कहते हैं।

‘प्रयाग’-‘तीर्थ-राज’ है, क्योंकि बाह्य व आन्तरिक दोनों ही दृष्टियों से यह मनुष्यों को तारनेवाला है।

बाह्य दृष्टि से यह गङ्गा-यमुना के मनोरम सङ्गम तक पहुँचानेवाला है तथा आन्तरिक दृष्टि से यह ‘इड़ा’-गङ्गा, ‘भारती’-पिङ्गला-यमुना एवं सरस्वती के चिन्तन से प्राप्त होनेवाले दिव्य आनन्द को दिलानेवाला है।

‘यजुर्वेद के निम्नलिखित मन्त्र को देखिए, इसमें ‘तीर्थ-राज’-प्रयाग सम्बन्धी ज्ञान-विज्ञान स्पष्ट रूप से झलकता है–“तीन देवियाँ हैं, जिन्हें इड़ा, सरस्वती और भारती कहा जाता है। मध्य में इनके योग के चिन्तन से आनन्द की प्राप्ति होती है। हे मनुष्य! तुम इनकी पूजा, इनसे सम्बन्धित देवताओं की अर्चना एवं योग द्वारा सङ्गति करो। तुम्हें सभी वस्तुओं की प्राप्ति होगी।”

(देखिए, ‘राष्ट्र-गुरु’ स्वामीजी महाराज विरचित ‘वैदिक उपदेश’)।

‘ऋग्वेद’ का खिल सूक्त (१०.७५) भी कहता है–‘जहाँ कृष्ण (काले) और श्वेत (स्वच्छ) जलवाली दो सरिताओं का सङ्गम है, वहाँ ‘स्नान’ करने से मनुष्य स्वर्गारोहण करता है।’

‘तन्त्रों’ में स्नान दो प्रकार के बताए हैं–१. बाह्य और २. आभ्यन्तर। आभ्यन्तर स्नान अत्यन्त रहस्य-मय है। सच्चिदानन्द-प्रवाह को भावना से देखना और उससे अपने को आप्लावित होता हुआ ध्यान करना ही आभ्यन्तर स्नान है, जिससे मुक्ति अर्थात् अमृतीकरण होता है।

‘पुराण’ इस बात को कुछ इस प्रकार कहते हैं–‘प्रजापति ब्रह्मा ने सृष्टि-प्रारम्भ करने हेतु तीन वेदियाँ बनाईं। इनमें ‘प्रयाग’-‘मध्यम’ वेदी है।’

महाभारत, वन-पर्व (८७, १८-१९) में इसी बात को इस रूप में कहा गया है–‘सर्वात्मा ब्रह्मा ने सर्व-प्रथम यहाँ ‘यजन’ किया था, इसीलिए इसका नाम ‘प्रयाग’-‘प्र + याग’-प्रकृष्ट याग पड़ा।’

‘नृसिंह-पुराण’ में नारायण को ‘योग’-मूर्ति के रूप में प्रयाग में स्थित बताया है।

‘मत्स्य-पुराण’ के अनुसार ‘रुद्र’ द्वारा एक कल्प के उपरान्त प्रलय करने पर भी ‘प्रयाग’ नष्ट नहीं होता। ‘ब्रह्मा’-छद्म रूप में, विष्णु-वेणी-माधव रूप में तथा शिव-वट वृक्ष के रूप में आवास करते हैं और सभी देव-गन्धर्व-सिद्ध-ऋषि पाप शक्तिओं से प्रयाग-मण्डल की रक्षा करते हैं।

संक्षेप में ‘मैं वहीं हूँ, मै शिव हूँ’–इस प्रकार का बोधात्मक ज्ञान ‘प्रयाग’ में होता है। यहाँ सब कुछ ‘सम-भाव’ में दिखता है। ‘सम-भाव’ की जाग्रति से मनुष्य निष्पाप हो जाता है और उसे ‘ललिता-माहेश्वरी-स्थिति’ प्राप्त होती है।

'तीर्थ-राज प्रयाग' में
माता श्रीललिताम्बा का विलक्षण स्वरूप
श्रीअलोपशङ्करी

भारत के आध्यात्मिक जगत् में ५१ या १०८ **शक्ति-पीठों** की बड़ी प्रसिद्धि है और इसी क्रम में यह भी मान्यता है कि '**प्रयागे तु ललिता**' अर्थात् तीर्थ-राज प्रयाग में श्री ललिता का शक्ति-पीठ है।

शक्ति-पीठों का सम्बन्ध प्रजा-पति दक्ष के उस यज्ञ से जोड़ा जाता है, जिसमें **भगवान् शिव की शक्ति सती** ने देह-त्याग किया था और उनके शरीर को लेकर **भगवान् शिव** उन्मत-वत् आकाश में इधर-उधर भ्रमण करने लगे थे। उन्हें इस मोह से मुक्त कराने के लिए **भगवान् विष्णु** को सती की देह को अपने **सुदर्शन-चक्र** द्वारा खण्ड-खण्ड करना पड़ा। इस प्रकार जो अङ्ग जहाँ-जहाँ गिरे, वहीं एक '**शक्ति-पीठ**' की स्थापना हो गई।

'**प्रयाग**'-**क्षेत्र में सती के हाथों की अँगुलियाँ** गिरीं और उनके तेज से यहाँ '**श्रीललिता-पीठ**' का आविर्भाव हुआ।

तीर्थ-राज प्रयाग में श्री ललिता अलोपशङ्करी देवी का स्थान आज '**अलोपी देवी**' के नाम से प्रसिद्ध है और इन्हीं के नाम से पूर्व-काल में, जब इस क्षेत्र में सघन बस्ती नहीं थी, केवल बाग-ही-बाग चारों ओर दिखाई देते थे, यह क्षेत्र '**अलोपीबाग**' नाम से विख्यात हुआ और इन दिनों भी **प्रयाग नगर** का उक्त क्षेत्र इसी नाम से जाना जाता है।

श्रीअलोपी देवी के मन्दिर में भगवती की कोई प्रतिमा नहीं है और न ही उनका कोई चित्रादि है। प्रमुख पूजनीय स्थान में एक **चौकोर चबूतरा** है, जिसके मध्य में एक **चौकोर छोटा-सा कुण्ड** है, जिसमें जल भरा रहता है। इस कुण्ड के ऊपर छत की कड़ी से लटकता हुआ एक **झूला** है। इसी **कुण्ड-झूले में भगवती श्री ललिता अलोपशङ्करी देवी** की पूजा भक्त-जन चिर-काल से करते आ रहे हैं। ऐसी मान्यता है कि **कुण्ड** में जल के नीचे '**श्री-यन्त्र**' प्रतिष्ठित है।

उक्त मन्दिर के ठीक सामने आधे फलांग की दूरी पर **भगवान् शङ्कर** का मन्दिर है। जिसमें **शिव-लिङ्ग** प्रतिष्ठित है। यही **शिव-लिङ्ग ललितेश्वर-भैरव** का स्थान है।

***

'तीर्थ-राज प्रयाग' में श्रीललिता
श्रीकल्याणी देवी

तीर्थ-राज प्रयाग में अलोप-शङ्करी के अतिरिक्त भगवती ललिता का दूसरा प्राचीन मन्दिर 'कल्याणी' भी है। यह मन्दिर प्रयाग के कल्याणी देवी मुहल्ले में है।

कल्याणी देवी के मन्दिर का जीर्णोद्धार सन् १८९३ में चौधरी महादेवप्रसाद ने कराया था। मन्दिर के अध्यक्ष पं० सीताराम पाठक के प्रयास से मन्दिर परिसर का निमार्ण सङ्गमर्मर से हुआ। श्री हरिराम अग्रवाल ने चाँदी का पूजा-मण्डप बनवाया।

कल्याणी देवी परिसर में तीन मुख्य मूर्तियाँ हैं। बीच में कल्याणी की, उनके बाँएँ भगवती छिन्नमस्ता तथा दाएँ शङ्कर-पार्वती की मूर्तियाँ है। मुख्य मूर्ति के शीर्ष पर दो मूर्तिया और हैं-दाएँ भगवान् श्रीगणेश और बाँएँ श्रीहनुमान जी की। अधो-भाग में दो योगिनियों की मूर्तियाँ और देवी का वाहन सिंह है।

देवी कल्याणी की मूर्ति के हाथों में त्रिशूल, चक्र, शङ्ख और खड्ग है। मूर्ति के ऊपर छः छिद्र हैं और दत्तात्रेय जी की मूर्ति है।

देवी कल्याणी के बगल में भगवती छिन्नमस्ता की मूर्ति के अगल-बगल रुधिर-पान करती हुई योगिनियों की दो मूर्तियाँ हैं।

शङ्कर-पार्वती की मूर्ति में भगवान् शङ्कर के दाएँ अङ्क पर पार्वती और पार्वती के दाएँ अङ्क पर गणेश हैं।

कल्याणी देवी का मन्दिर गांधार शैली का है। अनुमान है कि मूर्तियाँ दसवी सदी से पहले की हैं।

***

'तीर्थ-राज प्रयाग' में माता श्रीललिताम्बा के शिव
भगवान् मनकामेश्वर

'प्रयाग' में भगवती ललिता के शिव मनकामेश्वर का प्राचीन मन्दिर है।

'प्रयाग'-माहात्म्य' के अनुसार प्रयाग में मन-कामेश्वर का तीर्थ 'पिशाच-मोचन-तीर्थ' के पश्चिम में है, जो यमुना के किनारे सङ्गम के पश्चिम भाग में है। ऐसी मान्यता है कि 'पिशाच-मोचन-तीर्थ' में स्नान, जप आदि करने से सभी प्रकार की बाधाओं से मुक्ति मिलती है।

यमुना बाँध पर नदी के किनारे सरस्वती घाट के पश्चिम में मन-कामेश्वर का प्राचीन मन्दिर दर्शनीय है। मन्दिर से सटा हुआ घाट है, जहाँ बैठकर सीधे सङ्गम को देखा जा सकता है। यहाँ के घाट पर सदा जल रहता है। ध्यान, साधना की दृष्टि से यह स्थान आज भी अत्यन्त उपयुक्त है।

'तीर्थ-राज प्रयाग' में ऐतिहासिक पुरातन
अक्षय-वट

तीर्थ-राज प्रयाग में गङ्गा-यमुना-सरस्वती के पवित्र **'त्रिवेणी-सङ्गम'** पर किले के भीतर प्रसिद्ध **'अक्षय-वट'** है। **अक्षय-वट** के सम्बन्ध में यह मान्यता है कि जब महा-प्रलय होगा और सारी सृष्टि अपार जल-राशि में अन्तर्हित हो जाएगी, तब **केवल यही अक्षय-वट** शेष रहेगा और उस अनादि-अनन्त जल **के** पारावार के ऊपर **अक्षय-वट** की हरित पत्र-शैय्या पर **बाल-रूप में 'परमेश्वर'** शयन करते हुए विराजमान रहेंगे।

सन् १९५० तक किले के भीतर **'पाताल-पुरी'** के नाम **से प्रसिद्ध भू-गर्भीय मन्दिर** में अनेक प्राचीन देव-मूर्तियों के साथ **'वट-वृक्ष'** के एक तने की पूजा **'अक्षय-वट'** के रूप में होती थी। **वास्तविक जीवन्त अक्षय-वट** का पता किसी को नहीं था। **'सरस्वती'-पत्रिका** के यशस्वी सम्पादक **पण्डित देवीदत्त शुक्लजी** ने जब **'प्रयाग-राज के गौरव'** इस **'अक्षय-वट'** के सम्बन्ध में सन् १९५० ई० की **'चण्डी'-पत्रिका** में सम्पादकीय लिखी, तब **शुक्लजी** की सम्पादकीय के आधार पर **पं० शिवनाथ काटजू जी** मूल वास्तविक **अक्षय-वट** की खोज में लग गए।

पं० शिवनाथ काटजू जी का परिश्रम सफल हुआ और **जून १९५० में आषाढ़ शुक्ला एकादशी** के दिन उन्होंने अपने मित्र किले के अधिकारियों के साथ जाकर कोई साढ़े चार सौ वर्षों के बाद **परमाराध्य अक्षय-वट** का **पूजन** किया और उपस्थित सज्जनों को **प्रसाद** बाँटा।

प्रयाग-राज के इस ऐतिहासिक पुरातन अक्षय-वट की गरिमा इसी बात से स्पष्ट है कि **ब्रह्मर्षि भरद्वाज** के निर्देशानुसार **भगवती सीता** ने इस **पवित्र अक्षय-वट** की **पूजा-प्रदक्षिणा** की थी।

सत्रहवीं शताब्दी में आविर्भूत **गोस्वामी तुलसीदासजी** ने **पवित्र अक्षय-वट** का उल्लेख अपने **'श्रीराम-चरित-मानस'** में मार्मिक शब्दों में किया है। यथा–

पूजहिं माधव-पद-जल-जाता। परसि 'अक्षय-वट' हरखहिं गाता।
सङ्गम सिंहासन सुठि सोहा। छत्र अक्षय-वट मुनि-मन मोहा।

उपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य
भगवती शतक	५)
भक्ति-योग	५)
भगवती मानस-पूजा-स्तोत्र	१०)
भागवत धर्म का प्राचीन इतिहास	१५)
भैरवी-चक्र-पूजन	६)
मन्त्र-कल्पतरु, पुष्प-१, २	७०)
मन्त्र-सिद्धि का उपाय	६)
मन्त्र-कोष	३००)
मन्त्रात्मक-सप्तशती (सजिल्द)	५००)
महा-विद्या स्तोत्र	१०)
महा-गणपति साधना	३५)
मुद्राएँ एवं उपचार (सचित्र)	२५)
महा-शक्ति-पीठ विन्ध्याचल	२०)
मन्त्र-योग	५)
रमा-परायण	३५)
राम अङ्क	१०)
राज-योग	५)
रास-लीला-विज्ञान	१०)
ललिता-महा-त्रिपुर-सुन्दरी-पूजा	२५)
ललिता-सप्तशती	४५)
लेख-संग्रह-स्वामी दिव्यानन्द जी	५)
लघु चण्डी	१५)
वन्दे मातरम्	५)
वैदिक देवी-पूजा पद्धति	५)
वाम-मार्ग	(यन्त्रस्थ)
विशुद्ध चण्डी (श्रीदुर्गा-सप्तशती)	२५)
विज्ञान-योग	५)
शाबर-मन्त्र-संग्रह (बारह भाग)	३८५)
शाक्त धर्म क्या है?	१५)
शत-चण्डी-विधान	२५)
शिव-शक्ति-अङ्क	५०)
श्रीचक्र-रहस्य	२०)
श्रीविद्या-स्तोत्र पञ्चकम्	३५)
श्रीविद्या-सपर्या-वासना	१००)
श्रीत्रिपुरा महोपनिषद्	६)
श्री विद्या-साधना (५ पुष्प)	२००)
सप्तशती तत्त्व	३०)
सम्पादक के संस्मरण	५०)
साधक का संवाद	२५)
सौन्दर्य-लहरी	१५)
सौन्दर्य-लहरी के यन्त्र-प्रयोग	२०)
सार्थ सौन्दर्य-लहरी	८०)
सप्त-दिवसीय सप्तशती-पाठ	३५)
सम्पुटित सप्तशती	४५)
सविधि श्रीरुद्र-चण्डी	१०)
सांख्यायन तन्त्र (हिन्दी सारांश सहित)	१००)
साधना-रहस्य	५०)
सार्थ चण्डी (श्री दुर्गा सप्तशती)	२५०)
स्वर-विज्ञान	७५)
हवनात्मक सप्तशती	१००)
हठ-योग	५)
हिन्दी कुलार्णव तन्त्र	१००)
हिन्दी कौलावली-निर्णय	२५)
हिन्दी महा-निर्वाण तन्त्र	१५०)
हिन्दी शाक्तानन्द-तरङ्गिणी	१५)
हिन्दुओं की पोथी	२५)
होलिका-महिमा एवं पूजन-विधि	५)
होमेज टू एनसेस्टर्स (पितृ-पूजा)	२०)
आगमोक्त योग-साधना (अंग्रेजी में)	५)

श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६ फोन: ०५३२-२५०२७८३, ०९४५०२२२७६७

'चण्डी'-पुस्तक-माला द्वारा प्रकाशित

उपयोगी नवीन प्रकाशन

आदि-सम्पादक

'कुल-भूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल

१. श्री श्रीविद्या-खड्ग-माला
२. श्रीबगला-साधना (पुष्प १)
३. साधना-रहस्य
४. नव-ग्रह-साधना
५. हिन्दी कुलार्णव तन्त्र
६. हिन्दी महा-निर्वाण तन्त्र

मँगाने के लिए सम्पर्क करें :

श्री चण्डी-धाम, कल्याण मन्दिर प्रकाशन

अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

दूरभाष : ०५३२-२५०२७८३, ०९४५०२२२७६७